[१]

स्टालिन

(रूस का महान क्रान्तिकारी नेता जो पीटर से अधिक महान और आइवन से अधिक भीषण है)

लेखक

त्रिलोकीनाथ 'विशारद'

सम्पादक

आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री ।

प्रकाशक

राष्ट्रीय-प्रकाशन-मन्दिर
बाज़ार सीताराम
दिल्ली

मूल्य १।।) रुपया

आत्म निवेदन

हमको जोसेफ स्टालिन का जीवनचरित्र पाठकों के सन्मुख इतनी शीघ्र उपस्थित करते हुए प्रसन्नता हो रही है। विद्वान् पाठकों ने हमारी प्रस्तुत योजना को इतना अधिक पसन्द किया कि मन्दिर से प्रकाशित आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री कृत 'हिटलर और युद्ध' नामक प्रथम रचना केवल दो सप्ताह में ही आधी से अधिक समाप्त हो गई। इसी कारण हम अपनी योजना के अनुसार अपने दूसरे प्रकाशन के रूप में इस महान् क्रांतिकारी नेता का जीवन-चरित्र इतनी शीघ्र पाठकों की भेंट करने में समर्थ हो सके हैं। प्रस्तुत पुस्तक कोई मौलिक ग्रंथ न होकर एक राष्ट्रनिर्माणकारी नेता का जीवन चरित्र है, जो पीटर से भी अधिक महान् और आइवन से भी अधिक भीषण प्रमाणित हो चुका है। आज उसकी छाया मध्य एशिया और समग्र यूरोप पर पड़ रही है।

इस ग्रन्थ के लेखक श्री त्रिलोकीनाथ विशारद साहित्य क्षेत्र के लिये बिल्कुल नवीन व्यक्ति हैं। आशा है कि हिन्दी के पाठक उनकी इस भेंट को पसंद करेंगे। जैसा कि हम अपने प्रथम ग्रंथ में घोषणा कर चुके हैं, हमको अपने तीसरे ग्रंथ के रूप में इस ग्रंथ के बाद 'फ्रांस का उत्थान और पतन' पाठकों की भेंट करना चाहिये था। किन्तु इस बीच में यूरोप के राजनीतिक रंग मंच पर इतनी शीघ्रता से एक अत्यन्त विचित्र प्रकार की नवीन क्रांति हो गई कि हमको अपने पाठकों के विशेष अनुरोध से निश्चय करना पड़ा कि हमारा आगामी ग्रंथ रूमानिया के विषय में हो। इस ग्रंथ का नाम होगा 'रूमानिया बलिवेदी के पथ पर'। इसके लेखक श्री आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री ही होंगे।

विनीत—

शंकरलाल गुप्त 'विन्दु'

हमारे आने वाले ग्रन्थ

३ रूमानिया बलिवेदी के पथ पर।

४ फ्रांस का उत्थान और पतन।

५ राष्ट्रपति रूजवेल्ट।

६ आधुनिक जापान।

७ फिलिस्तीन की समस्याएं।

८ वर्तमान स्पेन।

९ भारतीय राजनीति की रूप रेखा।

१० मुसोलिनी और इटली।

११ मुस्लिम राष्ट्र।

१२ ब्रिटेन और वर्तमान युद्ध।

प्रकाशक—

प्रस्तावना

यद्यपि कहने के लिये रूस यूरोप के इस द्वितीय महायुद्ध में एक तटस्थ राष्ट्र है, किन्तु वास्तव में यदि प्रत्यक्ष नहीं तो अप्रत्यक्ष रीति से वह किसी भी लड़ाकू राष्ट्र के मुकाबले युद्ध में कम भाग नहीं ले रहा है। जिस प्रकार महाभारत में भगवान कृष्ण ने स्वय शस्त्र न पकड़ने पर भी सबसे अधिक उत्साह से युद्ध में भाग लिया था, उसी प्रकार रूस भी आज स्वयं लड़ाकू राष्ट्र की परिभाषा में न आने पर भी वर्तमान युद्ध में अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग ले रहा है।

हमने अपने एक पिछले ग्रंथ 'हिटलर महान्' में कहा था कि नात्सीवाद और साम्यवाद एक दूसरे के चिरंतन शत्रु हैं एवं उनमें उसी प्रकार मित्रता असम्भव है, जिस प्रकार चूहे और बिल्ली में मित्रता होनी असम्भव है। किन्तु २२ अगस्त १९३९ को सारे संसार ने अत्यन्त आश्चर्य के साथ रूस और जर्मनी की संधि के समाचार को सुना। किन्तु हमारी सम्मति अब भी वही है जो 'हिटलर महान्' लिखते समय थी। हमारी सम्मति में रूस और जर्मनी की उक्त संधि हार्दिक मित्रता नहीं, वरन् दो स्वार्थियों की एक राजनीतिक चाल थी। अपने एक दूसरे ग्रंथ 'राष्ट्रनिर्माता मुसोलिनी' में हमने बतलाया था कि फासिस्टवाद, नात्सीवाद अथवा साम्यवाद तीनों के ही डिक्टेटरों के स्वार्थ एक से हैं; अतः वह एक राजनीतिक चाल के लिये कभी भी एक हो सकते हैं। अपना पिछला ग्रंथ 'हिटलर और युद्ध' लिखते समय हमारे सामने वास्तव में यही स्थिति थी। अर्थात् संसार भरके डिक्टेटर अपने २ स्वार्थों की सुरक्षा के लिए संसार के सबसे बड़े साम्राज्यवादी देश ब्रिटेन के साम्राज्य में से हिस्सा बांटने के विचार से एक हो गए।

जैसा कि प्रस्तुत ग्रंथ से पाठकों को प्रगट होगा स्टालिन आरम्भ से ही कूटनीति का पुजारी है। जहां हिटलर और मुसोलिनी कूट राजनीति को पसन्द न कर स्पष्टवादिता से काम लेते हैं वहां स्टालिन उस नीति का ब्रिटेन से भी अधिक पुजारी है। स्टालिन की बाल्यकाल की आवारागर्दी, क्रांतिकारी क्षेत्र के आरम्भिक कार्य, उसके १९०५ को क्रांति के कार्य, १९१७ की क्रांति के कार्य, रूसी विधान के नाम पर की गई हत्याओं तथा ट्रॉट्स्की के ऊपर किये हुए अत्याचारों—सभी से उसकी उच्चतम कूटनीति का आभास मिलता है।

वास्तव में वर्तमान डिक्टेटरों में वह सबसे अधिक चतुर है। उसको फासिस्टवाद से इसलिये घृणा नहीं थी कि वह साम्यवाद का पुजारी था, वरन् उसकी घृणा का कारण उसकी साम्राज्य-लिप्सा थी। उसकी चतुर राजनीतिक दूर-दृष्टि ने यूरोप के इस होने वाले युद्ध का पहिले ही अनुमान कर लिया था। स्टालिन इस राजनीतिक दांव-पेच की बाजी में एक ऐसे चतुर खिलाड़ी के रूप में उतरना चाहता था कि इस युद्ध से जो कुछ लड़ाकू राष्ट्र रक्त की एक एक बूंद खर्च करके प्राप्त करें, वह उसको बिना परिश्रम एवं रक्त बहाए अनायास ही प्राप्त हो जावे। उसको दिखलाई दे गया कि इंगलैंड और फ्रांस के साथ उसकी यह नीति सफल होने वाली नहीं। अतः उसने १९३६ की फ्रैंको सोवियट संधि की धज्जियां उड़ा कर २२ अगस्त १९३९ को जर्मनी के साथ संधि करके समस्त संसार को आश्चर्य में डाल दिया। हिटलर कूट राजनीति में बिल्कुल कोरा था ही, वह स्टालिन की पट्टी में आगया और उसने पोलैंड को स्वयं जीत कर भी उसका रूसी भाग चुपके से स्टालिन को देकर पोलैंड के इस बटवारे पर २९ सितम्बर १९३९ को दूसरी रूस-जर्मन संधि की मुहर लगादी। इस संधि के

अनुसार जर्मनी और रूस ने पूर्वीय यूरोप क्षेत्र को अपने २ प्रभाव क्षेत्र में बांट कर तय किया कि वह इस विषय में तीसरे राष्ट्र की दस्तन्दाजी न होने देंगे। इस आशातीत लाभ की प्रसन्नता में स्टालिन ऐसा फूला कि वह अपनी नीति को भूल कर लोभी ज्वारी के समान फिनलैंड पर चढ़ दौड़ा। यद्यपि यहां उसे अच्छी तरह लोहे के चने चबाने पड़े, किन्तु उसके मित्र हिटलर ने उसको इस आपत्ति से भी बचा कर विजय दिलवा ही दी।

स्टालिन का उत्साह इस दूसरे लाभ से इतना अधिक बढ़ा कि उसने पुराने जार साम्राज्य को फिर अपने शासन में लाने का दृढ़ संकल्प कर लिया। अब की बार उसने अपनी कूट राजनीति का वह पासा फेंका कि २२ जुलाई १६४० को लिथुआनिया, एस्टोनिया और लटविया के तीनों बाल्टिक राज्यों की अपनी २ पार्लमेंटों ने सर्व सम्मति से अपने २ यहां सोवियट जन तंत्र बनाने का निर्णय किया। अपनी पश्चिमी सीमा से निश्चित होते ही स्टालिन ने पूर्वीय सीमा की ओर भी ध्यान किया। उसने २६ जून १६४० को रूमानिया को युद्ध की धमकी देकर उससे अपने पुराने रूसी प्रांत बेसरबिया तथा उत्तरी बुकोविना की मांग की। रूमानिया ने विवश होकर इस मांग को अगले ही दिन २७ जून को स्वीकार कर लिया। स्टालिन ने २ जुलाई १६४० तक इस प्रदेश पर अधिकार करके प्राचीन सम्पूर्ण जार साम्राज्य को अपने आधीन करने की अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण किया।

किन्तु इन लगातार मिलने वाली सफलताओं से उसकी साम्राज्य लिप्सा बराबर बढ़ती ही गई। इस समय जर्मनी के उद्योग से इटली भी युद्ध में उतर चुका था और जापान ब्रिटिश तथा फ्रेंच साम्राज्य को चुनौती दे रहा था। यह जान पड़ता है कि इस समय इन चारों ने ही पारस्परिक परामर्श से अपने २ प्रभाव क्षेत्र को

बांट लिया। यद्यपि इन संधियों को प्रकाशित नहीं किया गया, किंतु राजनीतिज्ञों का विश्वास है कि इन संधियों के द्वारा इटली को उत्तरी अफ्रीका और यूनान दिये गए। जर्मनी को शेष अफरीका, तथा पश्चिमी यूरोप के वह सब प्रदेश दिए गए जो जार सम्राट के शासन में नहीं थे। रूस को प्राचीन जार साम्राज्य के अतिरिक्त एशिया के मुस्लिम राष्ट्र भी दिए गए। भारत भी सम्भवतः रूस को ही दिया गया। जापान को चीन के कुछ भाग, फ्रेंच हिंद, चीन, बर्मा, मलाया प्रायद्वीप और प्रशांत महासागर के द्वीप दिए गए। धुरी राष्ट्रों का पिछली कार्यवाही भी इसी अनुमान को पुष्ट करती है और संभवतः इसीलिये भारत सरकार पेशावर को वायु आक्रमण के लिये तयार कर रही है।

किंतु हमारी सम्मति में रूस के भारत पर आक्रमण करने की कोई संभावना नहीं है। स्टालिन एक अत्यन्त चतुर कूटनीतिज्ञ है। उसकी नीति दूसरों के लाभ में भाग लेकर मरा मराया शिकार खाने की है। वह फिनलैंड युद्ध का आनन्द ले चुका है। अतः अब वह अपने पुरुषार्थ से शिकार मारना नहीं चाहता। यद्यपि वह धुरी राष्ट्रों का मित्र है और ब्रिटेन का मित्र नहीं है, किंतु उसको जर्मनी द्वारा ब्रिटेन के हराए जाने का पूर्ण विश्वास नहीं है। वह तो एक तटस्थ राष्ट्र के समान ब्रिटेन और जर्मनी के द्वंद्व युद्ध को देख रहा है। यदि ब्रिटेन जीत गया तो स्टालिन ब्रिटेन से मित्रता कर लेगा अथवा यदि दुर्भाग्यवश ब्रिटेन हार गया और जर्मनी जीत गया तो रूस थके मांदे जर्मनी से अधिक से अधिक प्राप्त करने के लिये दबाव तक से काम लेने में संकोच न करेगा।

प्रस्तुत ग्रंथ में लेखक ने वर्तमान राजनीति से बिलकुल प्रथक् रहते हुए स्टालिन के कूटनीति पूर्ण गत जीवन पर पर्याप्त प्रकाश डाला है। लेखक ने इस ग्रंथ में एक निष्पक्ष दर्शक के समान

स्टालिन के गुण और अवगुणों सभी को समान रूप मे दिया है। जहां वह स्टालिन की क्रांतिकाल की कूटनीतिपूर्ण कार्यावली को विशद शब्दों में उपस्थित करता है, वहां सोवियट रूस और शासन विधान के नाम पर किए गए स्टालिन के अत्याचारों का वर्णन भी उतने भी विस्तार के साथ देता है। इस प्रकार एक निष्पक्ष दृष्टिकोण से लिखा जाने के कारण यह ग्रंथ भारतीय राजनीति के विद्यार्थियों के लिए अत्यन्त उपयोगी बन गया है।

जैसा कि प्रकाशक के आत्म-निवेदन से प्रगट है, ग्रन्थ के लेखक महोदय हिन्दी संसार के लिए एक दम नवीन हैं। यद्यपि नवीन लेखकों में होने वाले गुण और दोषों से वह नहीं बच पाए हैं, किन्तु एक निष्पक्ष दृष्टिकोण के कारण हमने उनको हिंदी में प्रोत्साहन देना आवश्यक समझा। लेखक ने इस ग्रन्थ को नौ अध्यायों में लिख कर प्रकाशक को दिया था। इस बीच में ट्रॉट्स्की की मैक्सिको में हत्या कर दी गई। अतः हमने यह उचित समझा कि इस ग्रन्थ में ट्रॉट्स्की के चरित्र को भी पूरे का पूरा संक्षेप से दे दिया जावे। अस्तु हमने इस ग्रन्थ के दसवें अध्याय 'ट्रॉट्स्की और चतुर्थ अन्तर्राष्ट्रीय' को लिख कर उसमें ट्रॉट्स्की के सम्पूर्ण जीवन चरित्र को संक्षेप से दे दिया। ग्रन्थ के रूस की वर्तमान् राजनीति से दूर होने के कारण प्रस्तावना में उसके सम्बन्ध में भी संक्षेप से विचार कर लिया गया।

आशा है कि पाठक इस ग्रन्थ से पर्याप्त लाभ उठा कर हमारे परिश्रम में भाग लेंगे।

देहली — 'चन्द्रशेखर शास्त्री'

२०-१०-१९४०

स्टालिन

की

विषय-सूची

स्तालिन

१

बाल्यकाल की आवारागर्दी

एक नवयुवक अपने विचारों में डूबा हुआ शनैः २ बाज़ार में चला जा रहा है। उसने रूस के पुराने ढंग के वह वस्त्र धारण किये हुए हैं, जो उस देश के धार्मिक विद्यार्थियों के लिये विशेष चिन्ह समझे जाते थे। वह सिर झुकाए हुए उस धर्म पुस्तक के स्वाध्याय में तल्लीन है जिसे वह अपने हाथ से एक क्षण के लिये भी प्रथक् करना नहीं चाहता, क्योंकि वह जानता है कि भविष्य में उसे नेतृत्व करना है। अतः वह अपने आपको प्रत्येक प्रलोभन से तटस्थ रखना आवश्यक समझता है। नगर की गलियां प्रलोभनपूर्ण वस्तुओं से अटी पड़ी हैं। उनसे बचे रहने का यही एक मात्र उपाय है कि वह धर्म पुस्तकों के पवित्र वाक्यों को पढ़ता और बोलता हुआ चले और अपनी दृष्टि एक क्षण के लिये भी इधर उधर न जाने दे।

बाज़ार में थोड़े समय तक चलते रहने के पश्चात् नवयुवक विद्यार्थी उस पुल पर से गुजरा, जिसके नीचे कोरा-नदी का गाढ़ा मैला पानी चक्कर काटता हुआ बह रहा था। उस समय उस बहते हुए गदले पानी को देख कर उस के ओठों पर खेदपूर्ण हर्ष की रेखा दृष्टि गोचर हुई। क्योंकि उसको कई वर्ष पूर्व की—जब कि वह अन्य प्रकार का जीवन व्यतीत करता था—एक

घटना याद आगई। उस समय उसने अपने साथ बाल्यकाल के कुछ आवारागर्द मित्रों की एक मण्डली ले रक्खी थी और उनकी सहायता से वह नदी-तटवर्ती फल-विक्रेताओं की दुकानों पर आक्रमण किया करता था। यदि किसी अवसर पर कोई व्यक्ति इन अल्प-वयस्क चोरों को देख लेता और इनका पीछा करता, तो यह रक्षा के लिये नदी के वेगपूर्ण पानी में कूद कर किसी ओर निकल जाते थे।

उस समय उस नवयुवक विद्यार्थी के सामने एक अल्पवयस्क आवारागर्द लड़के का चित्र उपस्थित हुआ, जिसके मुख मण्डल पर भय के चिन्ह थे और जो एक हाथ में चोरी का खर्बूजा लिये पानी की लहरों को चीरता हुआ सामने के तट की ओर तीव्र गति से चला जा रहा था, जहां उसके साथी उत्सुक नेत्रों से उसके आगमन की बाट जोह रहे थे।

पाठक समझ गये होंगे कि यह विद्यार्थी हमारा चरित नायक जोजेफ स्टालिन था, जिसका बाल्यकाल गोरी नामक छोटे से ग्राम में (तफ़लस के निकट) एक दरिद्र परिवार में व्यतीत हुआ था। उसका पिता रूस के दक्षिणी प्रदेश गर्जस्तान का एक दरिद्र और दुःखी किसान था, जो जन्म भर कठोर परिश्रम करने पर भी इस योग्य न हो सका कि अपने जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता। उस गरीब की सारी आयु हल जोतते ही बीत गई। उसकी भूमि अपनी उपज से उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति न कर सकती थी। अतएव साथ ही साथ उसे मोची का कार्य भी करना पड़ता था। इस छोटे से निर्जन ग्राम में भविष्य के स्टालिन का बाल्यकाल सोसो के नाम से व्यतीत हुआ। बाल्यकाल में ही वह इतना चञ्चल, उद्धत और आवारागर्द लड़का था कि ग्राम के बहुत से व्यक्ति उस से डरते थे और उसके समवयस्क

लड़के तो मारे भय के उस से चार आंखें करते हुए भी घबराते थे।

यही कारण था कि छोटी आयु में ही उसने अपना एक प्रशंसक दल बना लिया था, जो उसे अपना अधिनायक समझता और उसका हार्दिक मान करता था। वह उन्हें अपनी देख रेख में विभिन्न स्थानों पर ले जा कर लूट खसोट मचाता और बाल्य-काल की आवश्यक वस्तुएं बिना मूल्य उड़ा लाता था। वह शरीर से दुबला पतला और आकृति में आरम्भ से ही अरुचिकर सा था। इस छोटी सी आयु में ही उसकी चमकदार आंखें इस बात का परिचय देती थीं कि इस निर्बल शरीर में अटल संकल्प-शक्ति और असाधारण दृढ़ इच्छाएं निहित हैं। गोरी ग्राम के वृद्ध किसानों को वह समय अब तक याद है जब कि ग्राम के आवारागर्द लड़के सोसो की आज्ञानुकूल युद्ध का खेल करते हुए ग्राम की सीमा के बाहर घास के ढेरों को आग लगा दिया करते थे। इस प्रकार के अवसरों पर सोसो और उसके साथी सैनिक के कर्तव्य का पालन करते हुए बारूद का प्रयोग करने में भी नहीं हिचकते थे। यह केवल सौभाग्य की बात ही होता था कि आग सारे ग्राम को भस्म करने के स्थान पर केवल घास के डेरों या अन्न-भण्डारों तक ही सीमित रहती थी।

जैसा कि ऊपर कहा गया है सोसो छोटी आयु से ही असीम उद्धत और अभिमानी लड़का था। उसका पिता—जो मोची भी था और किसान भी—दिन रात कठोर परिश्रम करता था और फिर भी अपने छोटे से परिवार की आवश्यकता-पूर्ति में असमर्थ था। खाली समय में जब कभी उसका ध्यान इस उद्धत लड़के की ओर जाता तो वह आश्चर्यचकित होकर सोचता कि इसका भविष्य क्या होगा? और उसका जीवन किन परिस्थितियों में व्यतीत होकर अन्त में किस परिणाम पर पहुंचेगा?

सोसो के पिता बसारियन ने अपने लड़के को सुधारने के लिये सभी उपाय किये। प्रारम्भ में उसने मारपीट भी की, क्योंकि पुराने विचार के लोगों में बालक को सुधारने का यह एक प्रसिद्ध तरीका चला आता था। किन्तु उद्धत सोसो की अहं-मन्यता की यह दशा थी कि वह मुंह बन्द करके खूब मार खाता और उससे कभी शिक्षा ग्रहण न करता था। मारपीट के आधा घण्टा बाद ही वह कोई नई शरारत सोचने लग जाता। उसकी दयालु माता कैथरीन ने बहुतेरा प्रयत्न किया कि उसे समझा बुझा कर सत्य-पथ पर चलावे। किन्तु उसका परिश्रम भी व्यर्थ ही गया।

उसने लड़के को कई बार एकान्त मे ले जाकर उसके हृदय पर यह अंकित करने का पूर्ण प्रयत्न किया कि उसके यह दुष्प्रयत्न और आवारागर्दी किसी समय सम्पूर्ण कुटुम्ब की विपत्ति का कारण बनेंगे। परन्तु पिता की कठोरता की भान्ति माता की विनम्रता और प्रेरणा भी व्यर्थ ही जाती थी। थोड़ी सी देर के पश्चात् ही सोसो अपनी श्रेणि के बालकों को साथ लेकर किसी नवीन आक्रमण की तय्यारी में संलग्न हो जाता। उसने बाल्यकाल मे ही लोगो पर आतङ्क पैदा कर दिया था। जब वह अपनी सेना सहित गलियों मे से गुजरता तो दूकानदार और खोंचे वाले दुकानें बन्द कर लेते अथवा सुरक्षित स्थानों में चले जाते। उन्हें भय रहता था कि कहीं यह सेना उन पर अत्याचार का बाजार गर्म न कर दे।

बेचारा पिता अपने मित्रों और सम्बन्धियों से पूछता कि इस उद्धत-बालक का भविष्य कैसा होगा एवं उसके सुधार का क्या उपाय हो सकता है? अन्तिम विचार उसके मस्तिस्क में यह आया कि उसके जीवन को सुधारने के लिये उसे किसी धार्मिक पाठशाला में प्रविष्ट कर दिया जावे।

अतएव सोसो को आयु चौदह वर्ष की होने पर उसे वकरास की धार्मिक पाठशाला में भर्ती कर दिया गया। वहां उसका पूरा और असली नाम लिखा गया जोजेफ दिसारिया। स्कूल अधिकारियों ने उसे अपने यहाँ की काली पोशाक पहना दी और ईश्वर जाने! यह इस स्कूल की सुधार-प्रिय व्यवस्था का प्रभाव था अथवा काली पोशाक का असर था कि इस बदनाम शरारती लड़के में महान् परिवर्तन हो गया।

एक मास बाद सोसो का पिता उसकी माता को साथ लेकर पुत्र की दशा देखने उस धार्मिक संस्था में पहुंचा। संस्था के अधिकारी फादर वास्टो गोफ़ ने उनसे भेंट करना स्वीकार कर लिया। उस समय माता और पिता दोनों के दिल धड़क रहे थे कि न जाने अब कैसी बुरी खबर सुनने में आवेगी। किन्तु फादर वास्टो गोफ़ ने होठों ही होठों में मुस्कराते हुए उन्हें संतुष्ट कर दिया। उस से यह जानकर उन दोनों के आश्चर्य की सीमा न रही कि जोजेफ़ सभी विद्यार्थियों में असाधारण परिश्रमी प्रमाणित हुआ है और यदि उसकी शिक्षा इसी गति से जारी रही तो निसन्देह उसका भविष्य अत्यन्त उज्वल बनेगा।

थोड़ी देर पश्चात् जब सोसो को उसके माता पिता के समक्ष लाया गया तो वह उस आवारागर्द लड़के में रूपान्तर देख कर आश्चर्यान्वित हो गए। उसकी आकृति पहचानी न जाती थी। लम्बे सूखे बाल जो मुर्गी के परों की तरह उठे से रहा करते थे, विधिपूर्वक छांटे हुए थे। वस्त्र काले थे, किन्तु बिल्कुल स्वच्छ और साफ़। सब से बड़ी बात यह थी कि उसके हाथों पर मैल का चिन्ह तक न था। इतना ही नहीं, लड़के ने क्षणमात्र के लिये भी अपनी आंखें ऊपर को न कीं। अपितु विनयपूर्वक अपना सिर झुकाए हुए माता पिता के सामने खड़ा

रहा। वृद्ध मोची और उसकी पत्नी ने शीघ्र ही जान लिया कि अब यह उनका पहले वाला स्वच्छन्द स्वेच्छाचारी बालक नहीं है, अपितु इस धर्मस्थान के थोड़े से निवास ने उसके जीवन का काया-कल्प कर दिया है।

जिस उद्धत शरारती लड़के से गोरी की जनता भयभीत रहा करती थी, उसे तफलस के संस्थान में प्रविष्ट हुए चार वर्ष बीत गए। इन चार वर्षों में कोई भी ऐसी घटना न हुई जिसके आधार पर यह समझा जाता कि लड़का उन्नति की बजाय अवनति कर रहा है। अपने इस नवीन रूप के कारण जोज़ेफ अपने पूर्व के व्यक्तित्व को—जबकि वह सोसो कहलाता था—पूर्णांश में विस्मृत कर चुका था।

विद्यालय के अध्यापकों ने विभिन्न समयों में जो विचार इस नवयुवक विद्यार्थी के सम्बन्ध में प्रकट किये वह आज तक सुरक्षित हैं। उन्हें अध्ययन करने से पता लगता है कि उस लड़के पर उस पाठशाला में जाने के पश्चात् बड़ा भारी क्रान्तिकारी प्रभाव पड़ा।

उपाध्यायों की राय थी कि वह इतने परिश्रम और ध्यान-पूर्वक पढ़ता और एक आदर्शपूर्ण संघर्ष के साथ जीवन व्यतीत करता है कि इस आधार पर ही यह कहा जा सकता है कि वह निश्चय ही भविष्य में रूसी चर्च का एक प्रसिद्ध पादरी बनेगा। यह वह समय था जबकि प्राचीनता प्रिय पादरी अपने विश्वासों को रूस की विभिन्न जातियों में फैलाने के लिये महान् प्रयत्न कर रहे थे। इस विशाल देश की सीमा में चालीस से अधिक प्रकार की जातियां एवं उपजातियां निवास करती थीं। सरकारी चर्च की यह नीति थी कि इन्हीं विविध जातियों के पादरियों द्वारा उनकी अपनी भाषा में शिक्षा-प्रसार कर अपनी इच्छानुकूल

धर्म-प्रचार जारी रक्खा जावे। नवयुवक जोज़ेफ़ गर्जस्तान प्रांत में पैदा हुआ था। अत: तफलस की धार्मिक संस्था के एक आदर्श विद्यार्थी के नाते उसके विषय में सोचा जाता था कि वह अपने प्रदेश में सफलतापूर्वक धर्म प्रचार का कार्य्य करेगा।

जोज़ेफ़ को इस विद्यालय में शिक्षा पाते चार वर्ष हो गए। यह चार वर्ष का समय बिना किसी विशेष घटना के गुज़र गया। नवयुवक विद्यार्थी ने इस काल में बड़े परिश्रमपूर्व पठन-पाठन का क्रम जारी रक्खा। जब जोज़ेफ़ की आयु १८ वर्ष की होगई तो उसे आज्ञा मिल गई कि वह सप्ताह में एक बार अपने माता पिता से मिल सकता है। माता पिता भी सोसो के बाल्य-काल की अपेक्षा अब ऐश्वर्यमय जीवन बिता रहे थे। पिता ने मोची का काम छोड़ दिया था। अब वह जूते के एक कारखाने में काम करता था।

कुछ वर्ष पूर्व का उद्धत और बदनाम लड़का अब अपने माता पिता का अत्यन्त प्रिय पुत्र बन गया। अब वह उससे किंचित् मात्र भी शुष्क व्यवहार नहीं करते थे, न ही उसके अपमानित होने का कोई अवसर उपस्थित होता था। उनका व्यवहार अत्यन्त कृपा-पूर्ण होता था, क्योंकि वह भली भान्ति जानते थे कि एक वर्ष पश्चात् ही उनका पुत्र एक पादरी की उपाधि धारण कर लेगा। इसके पश्चात् पास में ही कोई स्थान उसके लिये नियत कर दिया जावेगा। उसके निवास के लिये मकान और निर्वाह के लिये पर्याप्त वेतन और एक भू-भाग दिया जावेगा और इस प्रकार माता पिता भी अपने जीवन के शेष दिन एक स्वर्गीय आनन्द में बिता सकेंगे।

जैसा कि पहले बताया गया है, किसी समय का झगड़ालू और विद्रोही लड़का जिसके आचार व्यवहार में अब आकाश

पाताल का अन्तर हो गया था, अब एक आदर्श विद्यार्थी के रूप में कोरा नदी के पुल पर से गुजर रहा था। बाल्यकाल का चित्र उसकी आंखों के सामने आ उपस्थित हुआ। परन्तु वह एक अतीत समय की कहानी थी। उसने शीघ्र ही अपना सम्पूर्ण ध्यान अपनी धार्मिक पुस्तक में केन्द्रित कर दिया। अत: स्वाध्याय करता हुआ वह नदी के दूसरे तट पर पहुँच गया। तट के समीप ही उसके बाल्यकाल के समान अब भी फल वालों की दूकानें थीं। इधर उधर गर्जस्तानी उर्वरा भूमि के मधुर और सुस्वादु मेवे शोभायमान थे। नवयुवक विद्यार्थी चलते २ एक फल वाले की दूकान के आगे खड़ा होगया और मुस्कराने लगा। यदि वह अभी तक अपने बाल्यकाल का सोसो होता तो निश्चयपूर्वक इन फलों के ढेरों को देखकर ऐसे ही रिक्त-हस्त चले जाना स्वीकार न करता। अपितु जो कुछ हाथ लगता, उसे लेकर नदी में कूद पड़ता और तैर कर दूसरे किनारे पर निकल जाता। किन्तु भावी पादरी ने इस अवसर पर अपने पूर्व चरित्र की उपेक्षा कर जेब में हाथ डाला और कुछ छोटे सिक्के निकाले। फलवाले ने भी उसकी सूरत पहचानी और ओठों पर विचित्र प्रकार की मुस्कराहट के साथ उसके लिये हुये फलों को कागज के एक थैले में डाल दिया और वह इस बैग को हाथ में लिये पुन: आगे की ओर चल दिया।

जिस समय वह कागज हाथ में लिये गर्जिस्तानी अँजीरों को निकालता और खाता चला जाता था, अकस्मात् उसकी दृष्टि अखबार के उस कागज की ओर गई जिससे बैग बनाया गया था। वह किसी विशेष उद्देश के बिना ही उसके लेख को पढ़ कर एक दम चौंका और तुरन्त खड़ा हो गया। वह लेख को एक बार फिर ध्यानपूर्वक पढ़ने लगा। उस पर निम्न पंक्तियां लिखी

थीं, जिन्हें पढ़ कर उसका दिल बड़े जोर से धड़कने लगा—

"हम पूछना चाहते हैं कि अन्तमें किस समय तक······ और कब तक आप ज़ार के खूनी पँजे का अत्याचार सहन करते रहेंगे ? यदि एक दिन सारे किसान और मजदूर एक स्वर से कह दें कि बस अब अधिक अत्याचार सहन न किया जावेगा तो अत्याचारी ज़ार का शासन एक क्षण में ही समाप्त हो सकता है।"

उस विद्यार्थी ने जब उन पंक्तियों को पढ़ा तो उसके मस्तिष्क में विभिन्न विचारों की बाढ़ सी आगई। उसे अपनी आंखों पर विश्वास न होता था। वह चकित होकर सोचता था कि "यह भयंकर शब्द किसने छापने का साहस किया ?" उस पवित्र ज़ार के विरुद्ध जो कि रूसियों का पिता और गिरजों का स्वामी है, जिसका चित्र प्रत्येक गिरजे में रखा रहता है एवं जिसके लिये तमाम गिरजों में आरोग्य-प्रार्थना की जाती है ऐसे कठोर शब्द किसने लिखे—

वह कौन दुष्ट व्यक्ति होगा जिसने इन अपवित्र विचारों को लेखबद्ध करने का साहस किया ?"

इसके पश्चात् वह शीघ्रतापूर्वक कदम बढ़ाता हुआ पशकिन स्ट्रीट पर अपनी पाठशाला की ओर गया। उसने निश्चय कर लिया कि पाठशाला के अध्यक्ष से मिलकर वह अपवित्र लेख उसको दिखाएगा। जिस समय वह पाठशाला में पहुंचा तो उसका श्वास फूला हुआ था। वह उसी दशा में अपने कमरे में प्रविष्ट हुआ। कमरे में तीन आदमी पहले से ही बैठे हुये थे। उसमें से एक पाठशाला के प्रबन्धक और दो नवागन्तुक थे, जिनके विषय में पीछे पता लगा कि वह तफलस की खुफिया-पुलिस के कर्मचारी थे। कमरे में चारों ओर अस्तव्यस्तता का साम्राज्य था। पुलिस के कर्मचारियों ने प्रत्येक वस्तु ऊपर नीचे कर दी थी। उन्होंने अलमारी की तलाशी

ली। बिस्तर को उलट पुलट कर देखा। इतने में ही नवयुवक विद्यार्थी ने आश्चर्यचकित मुद्रा के साथ द्वार से प्रवेश किया। इसी समय पाठशाला के प्रबन्धकर्ता महोदय ने कहा कि 'मुझे पहिले ही पूर्ण विश्वास था कि जोजेफ के कमरे में किसी प्रकार का क्रान्तिकारी साहित्य नहीं मिल सकता।' इसके बाद वह तीनों आदमी कमरे से बाहर चले गए।

नवयुवक विद्यार्थी थोड़ी देर चुपचाप बैठा रहा। फिर उसने उस पत्र के अंक को मेज पर रक्खा और उसकी सलवटें दूर करने लगा। वह इस अपवित्र लेखपत्र को पाठशाला के प्रबन्धक को देना चाहता था, किन्तु इस तलाशी की घटना ने, जो उसकी अनुपस्थिति में हुई उसकी इच्छा में परिवर्तन कर दिया।

उसने पुनः उस लेख को एक बार पढ़ा और लोहे की अँगीठी के पास आकर धधकती आग में उसे स्वाहा कर दिया। वह अपवित्र लेख-पत्र भस्म में परिणत होगया और जोजेफ खड़ा २ पर्याप्त समय तक किसी उधेड़ बुन में लगा रहा।

२

विचार परिवर्तन

यह पहला ही अवसर था कि तफलस की पुलिस ने एक प्रतिष्ठित धार्मिक संस्था की चहार दीवारी के अन्दर घुसकर उसमें निवास करने वालों की तलाशी ली।

वस्तु स्थिति यह थी कि गुप्त षडयन्त्र जिसका आरम्भ कुछ वर्ष पूर्व रूस के दक्षिणी भाग में हो चुका था, अब शनैः २ भयानक अवस्था में आ रहा था। वह समाजवादी श्रेणि, जिसके सदस्य पहले अपने प्रधान केन्द्र तफलस से मार्क्सवाद के सिद्धान्तों का प्रचार करते रहते थे अब इतनी शक्तिशाली हो गई थी कि उसने खुल्लमखुल्ला शासन का विरोध करना आरम्भ कर दिया था। परस्थिति के यथार्थ रूप को जान कर अधिकारियों को भी हस्तक्षेप करने पर विवश होना पड़ा।

परिस्थिति में इतना परिवर्तन आ चुका था कि इस श्रेणि के कार्यकर्ता स्वतन्त्रतापूर्वक ऐसे इश्तहार और सूचना बांटते फिरते थे, जिनमें जनता को विद्रोह के लिये उकसाया जाता था। जब कोई शान्ति प्रिय रूसी बाजार में कोई वस्तु खरीदने जाता तो जिस लिफाफे में उसे सामान बन्द करके दिया जाता था उसमें क्रान्तिकारी श्रेणि की एक संक्षिप्त पत्रिका अवश्य रख दी जाती थी। समाजवादी श्रेणि के कार्यकर्ता प्रत्येक स्थान पर

पहुँचने लगे थे। वह गुप्त-रूप से सरकारी कार्यालयों, शिक्षण-शालाओं एवं साधारण मजदूरों तक पहुँच चुके थे।

आरम्भ में पुलिस इस भय को उपेक्षणीय समझ कर इसकी उपेक्षा करती रही। परन्तु वह शीघ्र ही इस परिणाम पर पहुँची कि यह बड़ा भयानक आन्दोलन है और इसे कठोरता से दबाए जाने की परम आवश्यकता है। जब परिस्थिति ने ऐसा रूप धारण कर लिया तो पुलिस के अधिकारियों ने स्थान २ पर तलाशियां लेना, लोगों को गिरफ्तार करना और निर्वासन की कार्यवाहियां करना शुरू कर दिया।

जिस धार्मिक पाठशाला में जोजेफ को शिक्षा प्राप्त करते चार वर्ष गुजर गए थे, उसके पुराने विद्यार्थी भी इस आन्दोलन से सहानुभूति रखते थे। उनकी यह एक साधारण रीति बन गई थी कि रविवार को जब थोड़ासा अवकाश मिलता तो वह किसी विद्यार्थी के कमरे में एकत्रित होकर क्रान्तिकारी श्रेणि के नवीन और ताजा पत्र पढ़ा करते थे। वह प्रत्येक विषय पर सरगर्मी से वाद विवाद करते और इस प्रकार उन क्रान्तिकारी विचारों से लाभ उठाते, जो उनकी सम्मति में महान् रूस को नाश से बचाने के एक मात्र साधन थे। यद्यपि जोजेफ इस संस्था में शिक्षण प्राप्त कर रहा था, किन्तु वह धार्मिक सिद्धान्तों में इतना निमग्न रहता था कि उसे कभी यह विचार भी न आया कि उसके साथी किसी नई विचार धारा में बहे जा रहे हैं। वह उदासीन और तटस्थ सा रहता था। उसे सब से बढ़कर अपनी धार्मिक पुस्तकों से प्रेम था। वह प्रतिक्षण इसी प्रतीक्षा में रहता था कि कब वह शुभ घड़ी आवे और मैं धार्मिक प्रचार द्वारा अपने वास्तविक कर्तव्य का पालन करूं। अपनी इस धुन में उसे यह भी पता न लगा कि दूसरे विद्यार्थी उस से दूर रहने

लगे हैं, बल्कि क्रियात्मक रूप से उसका बहिष्कार भी करने लगे हैं। अध्यापक मण्डल उसे नेक लड़का कहता और उसे आदर्श के रूप में अन्य लड़कों के समक्ष प्रस्तुत करता था। यही कारण था कि शेष लड़के गुप्त रूप से उससे घृणा करते और उसे बुरी दृष्टि से देखते थे।

पूर्वोक्त तलाशी के पश्चात् तफलस की पुलिस उस शिक्षणालय के दो ऐसे विद्यार्थियों को गिरफ्तार करके ले गई, जिनके कमरों में क्रान्तिकारी साहित्य पाया गया था। इस घटना पर जोजेफ की आत्मा में एक महान् परिवर्तन हुआ। जब पुलिस कर्मचारी उसके गिरफ्तार हुए साथियों को खींचते हुए ले गई तो वह पाठशाला के आँगन में से देख रहा था। उस समय उसने यह भी देखा कि अन्य विद्यार्थी यद्यपि चुपचाप थे, किन्तु अपने मित्रों की करुणाजनक दशा देखकर उनकी आंखों से बिजली सी निकलने लगी थी, ओष्ठ कठोरतापूर्वक बन्द थे और उनकी अवस्था ठीक ऐसी प्रतीत होती थी जैसी कि लोहे के सीखचों के पिंजरे में बन्द किसी हिंसक पशु की होती है।

मनुष्य जीवन में बहुत से परिवर्तन आते हैं। मनोवृत्तियों में भान्ति २ के परिवर्तन होते रहते हैं। कौन कह सकता है कि आज का साधु स्वभाव लड़का युवावस्था में पदार्पण करने पर किसी और ही लहर की ओर झुक जावेगा? जोजेफ में एक परिवर्तन तो उस समय हुआ था, जब उसे धार्मिक शिक्षणालय में भरती किया गया था। उसमें दूसरा परिवर्तन उस दृश्य के उपस्थित होने पर हुआ जबकि उसके मित्र गिरफ़्तार हो रहे थे। यह दूसरी बार का परिवर्तन ऐसा था जिसने साधु-स्वभाव जोजेफ के हृदय में वही पुरानी लड़ाकू और झगड़ालू स्पिरिट को जागृत कर दिया। कहने का तात्पर्य यह है कि कठोरता, अशान्ति और

चंचलता की जो भावनाएं उसके हृदय से विस्मृत हो गई थीं इस घटना ने उनको पुनः जाग्रत कर दिया।

शिक्षणालय में यथापूर्व कार्य्य चलता रहा। पाठशाला के रेक्टर ने शांतिपूर्ण ढंग से विद्यार्थियों को समझाने का प्रयत्न किया कि "यह नवीन आन्दोलन देश के लिये हानिकारक है। वह वर्तमान शासन के लिये अपमान है। उसका उद्देश्य पवित्र ज़ार को नाश करना है।"

दोपहर के अनध्याय में जब शिक्षणालय के विद्यार्थी एक स्थान पर एकत्रित होकर परस्पर बातें कर रहे थे तो जोज़ेफ़ को किसी कार्य्यवश उधर जाना पड़ा। किन्तु उसने देखा कि जब वह उनके पास पहुंचा तो सब लड़के चुप हो गए। ऐसी ही घटना उसको विद्यार्थियों की एक अन्य श्रेणि के साथ भी पेश आई। जब कोई रहस्यमय बात स्पष्ट हो जाती है तो अन्य बहुत सी सूक्ष्म बातें जो पहले अज्ञात रहती हैं बाद में स्वयं प्रकट हो जाती हैं। जोज़ेफ़ को यह समझ कर बड़ा आश्चर्य हुआ कि मैंने आज तक अपने सहपाठियों की नीति-परिवर्तन को कभी ध्यानपूर्वक नहीं देखा। उसे स्मरण हो आया कि निस्सन्देह लड़के उससे रूखा और उपेक्षापूर्ण व्यवहार करते थे। किन्तु वह अपनी पुस्तकों में इतना निमग्न रहता था कि वह कभी इन बातों की ओर ध्यान ही न दे सका था। उसका अधिकांश समय पुस्तकों के अध्ययन में ही व्यतीत होता था। अब उसने परिस्थिति का अवलोकन कर निश्चय कर लिया कि मैं शीघ्र अपने मित्रों से मिल कर प्रत्येक ग़लतफ़हमी को दूर कर दूंगा।

ऊपर बतलाया जा चुका है कि अब जोज़फ़ में फिर एक नया परिवर्तन हो गया था। पूर्व का वही सोसो मृत होकर जीवित हो चुका था। एक बार पुनः उसके अन्दर दूसरों पर शासन करने के

भाव जाग्रत होने लगे। वह उनके पास जाकर खड़ा हो गया। उसने सरल और स्पष्ट शब्दों में उनसे कहा कि तुम लोग मेरे प्रति किसी प्रकार का अविश्वास न रक्खो। मेरी हार्दिक इच्छा उस आन्दोलन का ज्ञान प्राप्त करने की है, जिसके कारण कुछ घण्टों पूर्व पुलिस वाले हमारे दो साथियों को गिरफ्तार करके खींचते हुए अपने साथ ले गए हैं।

जोज़ेफ के माता पिता सदा की भान्ति अगले रविवार को भी उसके आगमन की प्रतीक्षा करते रहे। किन्तु इस बार वह उनसे मिलने न गया। बात यह हुई कि उसने अवकाश का वह समय विद्यार्थियों के साथ गुजारा। सब लड़के नोह जोरदोनिया नामक पुराने विद्यार्थी की बैठक में एकत्रित हुए। यह वही नोह जोरदोनिया था जो १९१७ की रूस की प्रथम क्रान्ति के पश्चात् गर्जस्तान की राष्ट्रीय परिषद् (नेशनल गवर्नमेन्ट) का प्रथम प्रधानमंत्री बना।

इस दिन से जोज़ेफ ने वैसी ही प्रयत्नशीलता से-जैसी कि वह अपने धार्मिक शिक्षण में बर्तता था-इस क्रान्तिकारी आन्दोलन में भाग लेना आरम्भ किया। महान् साहस उसके स्वभाव का एक विशिष्ट गुण था। इस दिन से उसके साहस ने एक अन्य क्षेत्र में अपना चमत्कार दिखलाना आरम्भ किया। यह वह समय था जब उसने पहली बार उस ब्लाडी मेर एलच अलयानो का नाम सुना, जो अत्यन्त अद्भुत व्यक्ति था। जोज़ेफ के साथियों ने उसे बतलाया कि वह क्रान्तिकारी लेख, जिनमें मूक अग्नि की चिंगारियां छिपी रहती हैं, जिनका प्रकाशन रूस के प्रत्येक भाग में किया जाता है और जिसका एक नमूना उसने उस कागज में देखा था जिसमें उसे फल वाले ने फल लपेट कर दिये थे-सारा क्रान्तिकारी साहित्य उसी अद्भुत व्यक्ति की कृति था, जिसने अपना

कल्पित नाम लेनिन रक्खा हुआ था। जोज़ेफ़ ने इस रोमाञ्चकारी कहानी को गहरी दिलचस्पी के साथ सुना।

व्लाडी मेर एलच अलयानो ने सत्रह वर्ष की आयु में सन् १८८७ में यह भयानक समाचार सुना कि पुलिस ने उसके बड़े भाई अलेग्जेंडर को गिरफ्तार कर लिया है। उसका बड़ा भाई उस श्रेणि का प्रधान था जो ज़ार अलेग्जेंडर के प्राण लेना चाहती थी। इस श्रेणि के सदस्य दूसरे देशों में 'निहलिस्ट' के नाम से प्रसिद्ध थे। लेनिन के बड़े भाई अलेग्जंडर के विरुद्ध अपराध प्रमाणित हो गया और उसे प्राण-दण्ड मिला। जब इस घटना की खबर उस सत्रहवर्षीय लघुभ्राता के कर्णगोचर हुई तो उसने दुःख के साथ कहा "नहीं र, यह वह रास्ता नहीं है जो हमें अपनाना चाहिये।" परन्तु उस दिन से ही लेनिन ने अपने भाई की मृत्यु को दृष्टिगोचर रखते हुए कार्य्य करना आरम्भ कर दिया।

इस प्रकार वर्षों गुज़र गए। मजदूरों और किसानों में लेनिन का नाम प्रसिद्ध हो गया। क्रान्तिकारी श्रेणि की ओर से जितनी वीरतापूर्ण और उत्तेजनात्मक घोषणाएं निकलती थीं, उन सब पर लेनिन का नाम दिया होता था। अन्त में जब पुलिस पंजे झाड़ कर उसके पीछे पड़ गई तो लेनिन को वहां से भाग जाना पड़ा और उसने एक गुप्त स्थान से इस आन्दोलन का मार्गप्रदर्शन करना आरम्भ किया।

नवयुवक जोज़ेफ़ ने लेनिन की रोमाञ्चकारी कहानी बड़े आश्चर्य के साथ सुनी। उसे पता लगा कि वह आन्दोलन, जो लेनिन के नेतृत्व में आरम्भ हुआ है वास्तव में उस आन्दोलन से बिल्कुल भिन्न है जिसके कारण लेनिन के भाई को प्राण-दण्ड मिला।

इस सम्बन्ध में नोह जोर्डोनिया के वह शब्द विशेष कर उल्लेख-योग्य हैं जिनमें उसने लेनिन के आन्दोलन को स्पष्टतापूर्वक

दिखलाने का प्रयत्न किया है।

"हमें चाहिये कि निहलिस्टों की भांति व्यक्तियों के विरुद्ध व्यक्तिगत असंगठित हमले न करें। हम कार्ल मार्क्स के अनुयायी हैं और हमारी इच्छा है कि मजदूरों और किसानों को संगठन की लड़ी में पिरोया जावे। हम उनमें जाग्रति पैदा कर उन पर यह प्रगट करना चाहते हैं कि वास्तव में उनका जीवन कितना दासतापूर्ण है?......यही वह मार्ग है जिस पर हमें भविष्य में चलना चाहिये और उस पर चलते हुए आतंक-प्रसारक व्यक्तिगत घटनाओं से तटस्थ रहना चाहिये।"

यह पहला ही अवसर था कि जोज़फ़ ने विद्यार्थियों की सभा में भाग लिया। तथ्य यह है कि उसने उसी दिन से उस जीवन से मुंह फेर लिया जिसको वह गत चार वर्ष से व्यतीत कर रहा था। उसे नए आन्दोलन के साथ कुछ २ सहानुभूति होने लगी और वह प्रसन्नतापूर्वक उस आन्दोलन की प्रत्येक बात जानने का प्रयत्न करता था। अब वह केवल क्रांतिकारी साहित्य पढ़ता। पाठशाला के नियमानुसार वह दिन में साधारण सांसारिक साहित्य नहीं पढ़ सकता था। अतः रात में वह एक धुंधले दीपक के प्रकाश में इस नवीन साहित्य को पढ़ता था। एक दिन जब वह व्याख्यान सुनने गया और इसका ज्ञान उसके प्रोफेसरों को हुआ तो वह बड़े आश्चर्यान्वित हुए कि उनके साधु विद्यार्थी में भी यह परिवर्तन क्योंकर हुआ?

जोज़ेफ को धीरे २ इस आंदोलन से इतनी गहरी दिल-चस्पी हो गई कि वह उसकी प्रत्येक बात का ज्ञान रखने के लिये उत्सुक रहने लगा। इस आंदोलन के विषय में जो भी पुस्तक उसके हाथ में आती वह सब को पढ़ डालता। अब पाठशाला, अध्यापक मंडल, अपनी शिक्षा और अपने जीवन के कार्य्य क्रम सभी के

सम्बन्ध में उसके दृष्टिकोण में मौलिक परिवर्तन हो गया।

यह पीछे बतलाया जा चुका है कि सोसो नामक विद्रोही लड़का एक प्रकार से फिर से उसकी आत्मा में जाग्रत हो गया था—वही लड़का जो किसी के आधीन रह कर काम करना घृणित समझता था। परिणाम यह हुआ कि थोड़े ही समय में वह जो सबसे अन्त में इस श्रेणी में सम्मिलित हुआ था, इसका नेता बन गया। पहले जल्से में जाने के कुछ सप्ताह पश्चात् उसने विद्यार्थियों की एक कमैटी बनाई और बड़ी वीरता के साथ यह प्रतिज्ञा की कि जो विद्यार्थी अब तक इस आन्दोलन से प्रथक तथा उदासीन रहे हैं, मैं उनमें से एक २ से वार्तालाप करूंगा और उनकी शंकाओं का समाधान करने का पूरा प्रयत्न करूंगा। आन्दोलन के गुप्त कार्य्यों का अभी उसे कोई खास अनुभव न था, लेकिन किसी गुप्त शक्ति के प्रभाव में उसने जन्म-सिद्ध आंदोलक की भांति कार्य करना आरम्भ कर दिया। कुछ सप्ताह पश्चात् पुलिस दुबारा पाठशाला की तलाशी लेने आई और पुलिस सर्वाधिकारी ने विद्यार्थियों से कुछ प्रश्न भी पूछे। परन्तु इस तलाशी से उन्हें कुछ भी प्राप्त न हुआ।

बात वास्तव में यह थी कि जोज़ेफ ने क्रांतिकारी सभा के रूप में इस बात का खास ध्यान रक्खा था कि आपत्तिजनक कोई पत्रांश भी प्रकट न होने पावे। अतः इस उत्तम प्रबन्ध से उसने यह सिद्ध कर दिया कि वह कौनसे विशेष गुण हैं जो उसके व्यक्तित्व में निहित हैं और जिन्होंने उसे भविष्य में संसार-प्रसिद्ध 'स्टालिन' बना दिया।

जोज़ेफ की आयु १८ वर्ष की हो गई थी। अब उसके जीवन में एक कठिन प्रश्न उपस्थित हुआ। वह सोचने लगा कि मैं इस पाठशाला के नियमानुसार एक वर्ष और बिता कर

पादरी की उपाधि धारण करूं अथवा अपनी शिक्षा को यहीं पर समाप्त कर जीवन का दूसरा प्रोग्राम बनाऊं, जो वास्तव में मेरी स्वाभाविक प्रवृत्ति के अनुकूल हो। उसकी विचारधारा अपने माता पिता की ओर गई। उस पिता की ओर, जिसको आयु भर कठोर परिश्रम करना पड़ा था और उस माँ की जिसने अश्रुपूर्ण नेत्रों से अपने पुत्र से कहा था कि "पुत्र ! तू ही हमारे जीवन में सुदिन ला सकता है। जब तू पादरी बन कर निकलेगा तब ही हमारे दिन फिरेंगे।"

बहुत सोच विचार के पश्चात् वह इस परिणाम पर पहुंचा कि उसके लिये पाठशाला में एक वर्ष और शिक्षा प्राप्त करना असम्भव है। प्रोफेसरों को यह मालूम हुआ कि पापपूर्ण विचारों ने विद्यार्थियों की आत्माओं को अपवित्र बना दिया है तो उन पर कुछ कठोर प्रतिबन्ध लगा दिये, जिनके कारण जोज़ेफ के लिये अधिक समय तक ऐसे स्थान में रहना असम्भव प्राय हो गया।

इसके बहुत समय पश्चात् स्टालिन ने एक प्रसंग पर व्याख्यान देते हुए अपने जीवन के इस भाग के विषय में निम्न विचार प्रगट किये। "वहां हमको हर समय अपमानित किया जाता था। हर अवसर पर हमको यह बात महसूस कराई जाती थी कि विद्रोही व्यक्ति हमारे बीच में मौजूद हैं। जिस समय ९ बजे प्रातः हम भोजन के लिये अपने कमरों में से निकलते तो हमारी अनुपस्थिति में प्रोफेसर हमारे बक्सों और अल्मारियों की तलाशी लेते।" इस परिस्थिति में वही हुआ जिसकी संभावना थी। जोज़ेफ को पाठशाला छोड़ देनी पड़ी। इस सम्बन्ध में पाठशाला के रजिस्टर में निम्न लिखित शब्द अंकित हैं:—

"चूंकि जोज़ेफ बसारिया नोवच राजनैतिक षड्यन्त्रकारियों से मिलने लगा है और उनके रंगों में रंगा जा रहा है,

अतः उसे पाठशाला से निर्वासित किया जाता है।"

इस के अतिरिक्त एक रोज प्रोफेसरों ने देखा कि वह पाठशाला के गिर्जा में बैठा अपने साथियों से मजाक तौर पर प्रार्थना करा रहा था और उसके साथी दिल्लगी के तौर पर हंस रहे थे।

ईश्वर जाने वस्तु-स्थिति क्या थी सम्भव है कि विद्रोही विद्यार्थी ने यह देख कर कि इस धार्मिक पाठशाला से मुक्ति पाने का अन्य कोई साधन नहीं है तो उन्होंने ऐसी हरकतें आरम्भ करदी हों, जिनके कारण उनका वहां रहना असम्भव हो गया।

यह सन् १८६७ ई० की घटना है। अब व्यवसाय और रोज़गार से हीन जोज़फ़ गलियों में फिर आवारा फिरने लगा। उसने कोई धन्धा न सीखा था। जो शिक्षा उसने प्राप्त की थी उससे उसका मन फिर गया था। अपने सीखे हुए पाठों को वह शीघ्र भुला देना चाहता था। अब जब भी वह सोचता तो पादरी का जीवन उसे हास्यास्पद नज़र आता। जेब में एक पाई भी नक़द मौजूद नहीं। वह अपने माता पिता के पास भी जाते हुए हिचकिचाता था। क्योंकि वह सोचता था कि माता पिता की जो आशाऐं उसके जीवन के साथ थी वह भी समाप्त हो गईं। अब वह उनके सामने क्या मुँह लेकर जावे। वह अठारह वर्ष का नवयुवक जिसकी जीवन-नौका मझधार में फंस गई थी, टफलिस की गलियों में हर समय आवारा फिरता देखा जाता था। पेट के लिए भोजन मयस्सर नहीं। तन ढाँकने के लिये आवश्यक कपड़ा नहीं। निर्दय संसार के थपेड़े उस पर चारों ओर से पड़ रहे थे। परन्तु ऐसी विकट परिस्थिति में भी वह निराश अथवा परेशान नहीं था। उस पर आपत्ति के बादल मँडरा रहे थे, परन्तु वह दृढ़ता-पूर्वक उनका मुक़ाबला करने के लिये उद्यत था।

३

क्रान्तिकारी आन्दोलन

यदि कोई यात्री आज तफ़्लिस जावे तो जो व्यक्ति उसे नगर के विभिन्न दृश्य दिखलाने अपने साथ ले जावेगा वह निस्सन्देह कोरा नदी के तट पर बने एक छोटे और सादे रेस्टोरां (निवास-स्थान) को भी दिखलावेगा, जिसके साइनबोर्ड पर वही चिन्ह विद्यमान है जो रूस की क्रान्ति से पहिले था। उसका नाम ऐदमी रेस्टोरां है। उसका ऐतिहासिक महत्त्व है। जो व्यक्ति गाइड बनकर विदेशियों को विभिन्न स्थान दिखलाने ले जाता है वह इन शब्दों में इसकी महिमा का वर्णन करता है—

"यह ऐदमी रेस्टरां है·········गत शताब्दी के अन्तिम वर्षों में दक्षिणी रूस के समाजवादी नेता यहीं एकत्रित होते थे। उसी स्थान पर स्टालिन क्रांतिकारी समाजवादी दल का सदस्य बना था·········।"

यह घटना सोलहों आने सत्य भी है कि वह नवयुवक जो पादरी बनने के लिये धार्मिक संस्था में शिक्षा प्राप्त कर रहा था, वह वहां से निकाले जाने के पश्चात् इसी स्थान पर दक्षिणी रूस की समाजवादी श्रेणी के नेताओं से मिला करता था। ऐसा प्रतीत होता है कि अज्ञात ईश्वरीय हाथ ने ही उसका मार्ग निर्देश कर उसके पग इस ओर मोड़े थे।

लेनिन इस आन्दोलन का संचालक और नेता था। उसने कुछ हिदायतें अपने महान् सहयोगी कोर्नालोस्की के नाम भेजी थीं, जो वर्षों से उसके साथ कार्य कर रहा था। उसे उसका सहायक नेता समझा जाता था। इन्हीं हिदायतों में से एक वाक्य यह था—

"हमें नवयुवकों को ऐसी पद्धति पर तयार करना चाहिये कि वह भावी क्रांति के लिए न केवल अपना अवकाश का समय दें, अपितु अपने सम्पूर्ण जीवन को वह इसके लिये लगाने को उद्यत हो जावें।"

जोजेफ भी लेनिन के सहायक के पास पहुँचा। खयाल किया जाता है कि कमेटी के दूसरे मेम्बर जो कई बार क़ैद की सजाएं भुगत चुके थे, निस्सन्देह इस नवयुवक के मुख से उसके जीवन की घटनाएं सुन कर मुस्कराए होंगे। खास कर उस समय जब उसने अपने गुजरे हुए क्रांतिकारी समय का हाल वर्णन करते हुए विद्यार्थियों के जलसों में गर्व के साथ कहा होगा कि इन्हीं आन्दोलनों के कारण उसे पाठशाला से निर्वासित किया गया था।

अपने संक्षिप्त क्रांतिकारी भूतकाल के आधार पर नवयुवक जोजेफ को निश्चित रूप में अल्पायु षड्यन्त्रकारियों की श्रेणि में नहीं गिना जा सकता था। तो भी जब कोर्नालोस्की ने उसकी प्रभावशाली बात-चीत सुनी और उसकी चमकीली आंखों को देखा तो उसने सहज ही जान लिया कि अबकी बार एक ऐसा नवयुवक मिल गया है कि जो लेनिन की इच्छाओं के अनुसार न केवल अपना अवकाश का समय, अपितु अपना सारा जीवन इस क्रांति की भेंट कर सकता है।

जोजेफ में कुछ ऐसे गुण थे, जिनके कारण वह नवयुवकों

में सर्वप्रिय बन गया। वह गर्जस्तान प्रान्त में पैदा हुआ था। अतः वह उस स्थान को भाषा, अपितु उस भाषा की विभिन्न उपभाषाओं से भी भली भान्ति परिचित था। उसके माता पिता पहले किसान थे और बाद में मजदूर बन गए। उसने स्वयं एक धार्मिक शिक्षण-संस्था में शिक्षा प्राप्त की थी। इसके अतिरिक्त उसके मुख से निकले हुए प्रत्येक शब्द में एक चमत्कार सा पाया जाता था। उसके स्वभाव में धर्म के प्रति इतनी प्रगाढ़ और अन्ध श्रद्धा विद्यमान थी कि यह जानना कठिन न था कि वह इस आन्दोलन के नेताओं में एक अच्छा कार्य कर्ता सिद्ध होगा। यह घटना १८६७ ई० की है और सच पूछा जावे तो स्टालिन······भविष्य के स्टालिन के जीवन का काया-कल्प होना यहीं से आरम्भ हुआ और इसी स्थान से उसके क्रान्तिकारी जीवन का आरम्भ हुआ।

तीस वर्ष पश्चात् १९२७ ई० में जब स्टालिन प्रशान्त रूस का सत्ताधारी सर्वाधिकारी बना तो उसने तफलस में एक व्याख्यान देते हुए अपने जीवन की प्रारम्भिक अवस्था पर इस प्रकार प्रकाश डाला—

"मुझे वह समय याद है जब मेरी सेवाओं का आरम्भ था और तफ़लस के मजदूरों ने सर्वप्रथम मेरे तुच्छ व्यक्तित्व पर विश्वास कर मुझे प्रोत्साहन दिया था। यद्यपि यह ३० वर्ष पूर्व की बात है, परन्तु मैं उसे भूला नहीं हूँ। मैंने कामरेड स्टोवन की बैठक में क्रियात्मक कार्य का पहला पाठ कैसे पढ़ा था, यह मुझे अब भी याद है। उस अवसर पर कई महान् क्रान्तिकारी भी उपस्थित थे—जी ब्लेज,शुडरक बली, शकनेज आदि। उनके मुक़ाबले में एक तुच्छ नौसिखिया था और उस समय मेरा कोई महत्व नहीं था। सम्भव है मुझे उनकी अपेक्षा क्रान्तिकारी

साहित्य का अधिक ज्ञान हो। किन्तु क्रियात्मक क्षेत्र में उनके सामने मेरा कोई महत्व न था। उन्हीं लोगों के तत्वाधान में मैंने क्रान्तियों में भाग लेना सीखा। आप सब लोग जानते हैं कि तफ़लस के मज़दूर मेरे सबसे प्रथम गुरु थे और अब ३० वर्ष के बाद उन्हें मैं फिर धन्यवाद देता हूँ कि उन्होंने उस समय मुझे अपना शिष्य बनाना स्वीकार किया था।"

यद्यपि रूस के डिक्टेटर ने तफ़लस में अपने क्रान्तिकारी जीवन का अति सूक्ष्म वर्णन किया है, तथापि यदि ध्यान पूर्वक देखाजावे तो वह यही चमत्कारी नौसिखिया था जिसने सर्व प्रथम तफ़लस में मजदूरों के आन्दोलन को वृहत् रूप में व्यवस्थित किया। शहर के बीच में एक गली थी जिसका नाम अन्धेरा बाजार प्रसिद्ध था। इस स्थान पर असंख्य दूकानों की श्रेणी थी। इस भाग का यह नाम इस कारण पड़ गया था कि यह दूकानें वर्ष भर सूर्य के प्रकाश से वञ्चित रहा करतीं थीं, किन्तु इन दूकानों में इतना अधिक व्यापार होता था कि संसार की बड़ी २ मंडियां भी इनके मुक़ाबले में हेच समझी जा सकती थीं। यहां से सुदूरपूर्व का माल लन्दन, पेरिस और बर्लिन तक जाया करता था।

इन दूकानों में न्यूनाधिक २० हज़ार गुमाश्ते काम करते थे। जोज़फ़ के ज़िम्मे यह कार्य सौंपा गया कि वह इन बीस हज़ार नवयुवकों को व्यवस्थित और संगठित करे। जोज़फ़ ने जो विधि धारण की वह प्रबन्ध-शक्ति का उत्तम उदाहरण है। वह जानता था कि इन लोगों को बहुत अल्प वेतन मिलता है और इन्हें प्रातः उषाकाल से रात्री के घोर अन्धकार तक दूकानों के अन्दर काम करना पड़ता है। किन्तु वह यह भी जानता था कि वह किसी अज्ञात आन्दोलन के शब्दों को निश्शंक और विश्वासपूर्ण नहीं समझेंगे। अतः उन्हीं जैसा बनने के लिये उसने

अन्धेरे बाजार में एक नौकरी कर ली और थोड़े समय के लिये इस सत्य को बिल्कुल विस्मृत-सा कर दिया कि किसी समय वह एक धार्मिक विद्यार्थी रह चुका है। उसने निरन्तर कई मास तक एक व्यापारी के यहाँ नौकरी की। इस व्यापारी का कारोबार जैदग मज आदर्स के नाम से चलता था। जोजेफ़ प्रति दिन बहुत प्रातः उठ कर दूकान में माल ले जाता। दिन भर और रात्रि के आरम्भिक भाग में खड़े २ दूकान का काम करता। इसके पश्चात् थका मान्दा अन्धेरे बाजार के अन्य कर्मचारियों के साथ घर लौट आता था।

इस प्रकार कुछ मास तक स्वयं अनुभव कर वह अपने साथियों के कष्टों को जानने में सफल हो गया। इसके पश्चात् घटनाएं आश्चर्यजनक गति के साथ घटनी आरम्भ हुईं। एक दिन उसने अपने स्वामी से वेतन वृद्धि के लिये विनय की। न केवल विनय, अपितु, उसने आग्रह किया कि मुझे अधिक वेतन जरूर मिलना चाहिये। यह ऐसी कार्यवाही थी जो पहले कभी देखने में नहीं आई थी। स्वामी की तो क्या बात, अन्य कर्मचारी भी उसका साहस देखकर दांतों तले अंगुली दबाने लगे। प्रत्येक व्यक्ति आश्चर्य चकित होकर सोचता था कि यह विचित्र कर्मचारी है। इसे यहां कार्य करते केवल कुछ ही मास हुए हैं और इतने शीघ्र वह अपने वेतन से असंतुष्ट हो गया इसकी यह दशा है, उधर वर्षों से कार्य करने वाले उसी वेतन पर काम किये चले जा रहे हैं।

जैदिग मज आदर्स के अध्यक्ष ने जब इस विचित्र निवेदन को सुना तो उसने पुराने ढर्रे पर कार्य करते हुए धृष्ट नवयुवक को उसी समय नौकरी से प्रथक कर दिया। इसके कुछ दिन पश्चात् अन्धेरे बाजार के बीस हजार कर्मचारियों में एक प्रबल

आन्दोलन आरम्भ होगया। इनमें से पांच व्यक्तियों की एक कमैटी बनाई गई, जिन्होंने इन लोगों को हड़ताल करने पर उकसाया। रूसी पुलिस ने पहले किसी अवसर पर भी ऐसी हड़तालों में हस्तक्षेप नहीं किया था। अत: उसकी ओर से किसी प्रकार का भय न था। थोड़े समय में ही उनके प्रचार ने इतना विराट रूप धारण कर लिया कि वह हड़ताल की तिथि नियत करने में सफल होगये। इन्हीं दिनों एक दुर्बल नवयुवक हर समय इस बाज़ार की अंधेरी गलियों में फिरता देखा जाता था। उसका कार्य यह था कि जिन लोगों को अभी तक हड़ताल में सम्मलित होने में झिझक होती थी, वह उनकी विविध शङ्काओं का निवारण कर उनका सह-योग प्राप्त करता था। कर्मचारियों को इसका असली नाम ज्ञात न था। अत: वह इसे भी अन्य की भान्ति 'सोसो' ही कहते थे।

यह बात विशेष तौर पर वर्णन योग्य है कि जोज़ेफ़ ने जो नाम अपने लिये क्रांति के समय में पसन्द किया वह उसके बाल्यकाल का सर्वप्रिय नाम था। नियत समय पर हड़ताल हो गई। आरम्भ में ऐसा जान पड़ता था कि वह नहीं चल सकेगी। बीस हज़ार कर्मचारियों में से केवल आधों ने इसमें भाग लिया। आन्दोलन के नेता ने निश्शंक होकर हड़ताल का विरोध करने वालों से वही सलूक किया जो दीर्घकाल तक संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में बरता गया। जिस दूकान में ऐसे कर्मचारी मौजूद होते थे, जो हड़ताल में सम्मलित न होते थे। उनके सामने दस नवयुवकों की टोली जाकर खड़ी हो जाती और दूकान के मालिक से कहती, "यदि तुम दूकान बन्द न करोगे तो हम तुम्हारा सारा माल बर्बाद कर देंगे।" भयभीत व्यापारी भली प्रकार जानता था कि उसके मूल्यवान चीनी-कपड़े एवं हिन्दु-स्तानी मसाले थोड़े से तेल या पैट्रोल से शीघ्र ही खराब किये

जा सकते हैं। अतः वह टोली की आज्ञा का पालन करने के लिये विवश हो जाता था।

जब परिस्थिति अत्यन्त विकट होगई और व्यापारी अधिक भयभीत रहने लगे तो उन्होंने इस प्रणाली के विरुद्ध पुलिस से सहायता मांगी। किन्तु पुलिस की सहायता व्यर्थ प्रमाणित हुई। यदि कोई व्यापारी साहस करके दूकान खोल लेता तो इस भांति की घटना घटती कि कोई अज्ञात खरीदार कोई वस्तु मोल लेने के बहाने से दूकान के अन्दर आता और अवसर पाकर तेल या अन्य ऐसी ही कोई वस्तु उसके बढ़िया माल पर गिरा कर उसकी अपार हानि कर डालता।

जब आन्दोलन ने प्रबल रूप धारण कर लिया तो कासिक सवार बुलाये गए। उनके आक्रमणों से बहुत से आदमी मारे गये तथा असंख्य ज़ख्मी हुए। किन्तु कार्य्य कर्त्ताओं की धीरता में कोई अन्तर न आया। दूकानदारों को शीघ्र ही अनुभव हो गया कि किसी अज्ञात शत्रु से युद्ध जारी रखना उनके लिए क्रियात्मक रूप में असम्भव है। शनैः २ परिस्थिति इतनी बिगड़ गई कि उस अन्धियारे बाज़ार में एक भी दूकान ऐसी दृष्टिगोचर न हुई जिसको खोल कर सामान बेचा जा सकता।

हड़ताल ने अपूर्व सफलता प्राप्त की, किन्तु सोसो अंतिम समझौते में भाग न ले सका। पुलिस ने उसके कुछ आतङ्कपूर्ण कार्यों के कारण उसके विरुद्ध गिरफ़्तारी के वारंट जारी कर दिये। उसके कारागार में पदार्पण करते ही समाजवादी श्रेणी में अशान्ति छा गई। किन्तु इस वारन्ट जारी होने ने उसे पार्टी का वास्तविक सदस्य बना दिया। अभी तक उसे पुराने कार्य कर्त्ताओं के समान जेल जाने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ था। अब वह त्रुटि भी पूरी होगई और उसे भी जेल-यात्रा का सौभाग्य प्राप्त हो गया।

४
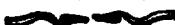
क्रान्तिकारी क्षेत्र में प्रथम पग

जोज़ेफ़ के जीवन-संघर्ष की घटनाओं का दूसरा केन्द्र बातूम नगर बना। इसका वर्णन अगली पंक्तियों में किया जाता है।

जोज़ेफ़ तफ़लिस की पुलिस से बच कर भाग निकला और समुद्रीय तट पर बातूम के एक छोटे होटल में रहने लगा। अब जो कार्य्य उसे अपनी पार्टी के लिये करना पड़ा वह पहले की अपेक्षा अधिक भयंकर और उत्तरदायित्व पूर्ण था। सप्ताह में दो बार मुसाफ़िरों के जहाज़ फ्रांस और जर्मनी के बंदरों से बातूम आते थे और प्रत्येक जहाज़ कुछ-न-कुछ क्रियात्मक सामग्री इस पार्टी के लिये अवश्य लाता। इस पार्टी का मुख्य नायक लंदन में बैठा हुआ था और वहीं से अस्करा-पत्र (चिंगारी पत्र) को प्रकाशित करता था। पत्र के मुख्य पृष्ठ पर निम्न लिखित अर्थ बोधक वाक्य अंकित रहता था। "वह चिंगारी, जिसे भविष्य में एक धधकते अंगारे का रूप धारण करना है।"

असंख्य प्रकाशित पत्र विदेशी जहाज़ों की सहायता से यहां पहुँचते रहते थे। जहाज़ों पर काम करने वाले नाविकों में इस पार्टी के कई व्यक्ति थे। अतः इन पत्रों के लाने में कोई विशेष विलम्ब न हो पाता था। किन्तु उधर पुलिस भी बेख़बर

न थी। उसके आदमी हर एक बन्दर की निगरानी करते रहते थे और पत्रों का कोई बंडल कठिनता से उनकी आंखों से बच पाता था। यह दशा देख कर पार्टी के सदस्य नाविकों ने पत्रों के संरक्षण का एक अन्य साधन जुटाया। जहाज के बन्दरगाह में प्रवेश करने से पूर्व ही वह जब्त कागजों का एक ऐसा पुलिन्दा बना कर समुद्र में फेंक देते जिस पर पानी कुछ असर न कर सके। पार्टी के अन्य कार्यकर्त्ता नावों पर चढ़ कर आस पास फिरा करते थे। वह जहां ऐसे बंडल को पानी में तैरता देखते तुरन्त निकाल लेते।

कभी २ इन बण्डलों में समाचार पत्रों के स्थान पर बड़ी २ पत्रिकाएं अथवा हथियार भी रख दिये जाते थे। कभी ऐसा भी होता था कि एक पूरा छापेखाना टुकड़े २ करके इसमें सुरक्षित रख दिया जाता था, जिससे पार्टी के कार्यकर्त्ता रूसी प्रदेश में अपनी पत्रिकाएं इसके द्वारा प्रकाशित कर सकें। सार्वजनिक छापेखाने पर कई प्रकार के प्रतिबंध लगे हुये थे और उनमें इस प्रकार का प्रकाशन करना कठिन था।

निस्सन्देह यह कार्य अति भयंकर था, क्योंकि यदि इस तरह का सामान किसी व्यक्ति के पास मिल जाता तो पुलिस उसको साइबेरिया में निर्वासित किये बिना न रहती। किन्तु जोसेफ युवक था। उसने इस कार्य को अत्यन्त साहस और लगन के साथ आरम्भ कर दिया। शीघ्र ही उसने सिद्ध कर दिखाया कि वह क्रान्ति की शिक्षा में पूर्ण शिक्षित हो चुका है। उसका नियम था कि जब कभी किसी मोर्चे को सर करने रवाना होता तो पहले से ऐसा प्रबन्ध कर लेता कि पुलिस को उस पर किसी प्रकार की शंका न हो पाती।

जब कभी वह नाव पर बैठ कर किसी ऐसे कार्य के लिए

रवाना होता तो एक मछली पकड़ने का जाल लेता और उसमें एक ताजा पकड़ी हुई मछली रख लेता। इससे यह लाभ था कि यदि खुफिया पुलिस का कोई कर्मचारी उस नाव को देखता और उसे उसमें संदेहपूर्ण सामान दृष्टिगोचर होता तो जोजेफ सहज ही कह देता "मैं तो एक दरिद्र मछियारा हूं। मछली पकड़ना मेरा व्यवसाय है। जाल डाला था उसमें यह वस्तु भी आगई। इसमें मेरा क्या अपराध है?"

यह उत्तर प्रत्येक प्रकार से पर्याप्त होता, किन्तु छापाखाना चलाने के लिये कोई सरल उपाय ढूंढना सरल कार्य न था, तो भी बातूम के एक निर्जन श्मशान में जमीन के नीचे इस श्रेणी ने समुद्र से निकाले हुए बण्डलों की सहायता से एक बड़ा छापाखाना स्थापित कर ही लिया, उसमें प्रकाशन-कार्य्य निरंतर चालू रहता था।

जब वह इस मुद्रणालय की सहायता से पहला पत्र छापने में सफल हो गया तो युवक जोजेफ की प्रसन्नता की कोई सीमा न रही। अपनी इस सफलता पर उसे इतनी अधिक प्रसन्नता हुई कि वह इस प्रसन्नता के चक्कर में आवश्यक सावधानी न रख सका जो उसके अब तक के कार्यों का रहस्य थी। अतः जब पुलिस के आदमी दूसरे ही दिन प्रातः उसके मकान पर पहुंचे तो उन्हें उसके कमरे में बहुत से ताजा छपे हुए गोले कागज प्राप्त हो गए। ऐसे जबर्दस्त प्रमाणों की विद्यमानता में सभी प्रकार के इंकार अथवा आपत्तियां व्यर्थ थीं। भागने की भी कोई सूरत सम्भव न थी। परिणाम यह हुआ कि पुलिस के कर्मचारियों ने उसे हथकड़ी डाल दी और जोजेफ उनके साथ चलने पर विवश हो गया।

इस स्थल पर जोजेफ का वह हुलिया जो पुलिस ने

उसकी प्रथम गिरफ्तारी पर अपने कागज़ात में लिखा था दे देना रोचक होगा—

क़द २ अर्चन ४॥ दूरशोक, शरीर-रचना दर्मियाना, आयु २३ वर्ष, विशेष चिन्ह बायें पैर की दूसरी और तीसरी अंगुलियां परस्पर संयुक्त, कान साधारण,बाल स्याही लिये हुये भूरे, दाढ़ी भूरी, मूछें टेढ़ी, नाक लम्बी और सीधी, मस्तक सीधा और ढलवां, चेहरा गोल चेचक के दाग़ वाला, अन्त में उसका नाम पूरे ब्यौरे के साथ छपा था–जोज़ेफ वसारिया नोविच जोगाशली, उपनाम सोसो।

युद्ध से पूर्व रूस की जो परिस्थिति थी उसमें जिस व्यक्ति के यह चिन्ह हों उसका नाम तुरन्त काली सूची में लिख लिया जाता था। यही कारण है कि स्टालिन ने अपने लम्बे क्रांतिकारी जीवन में पहली गिरफ़्तारी के बाद अपना असली नाम प्रयुक्त नहीं किया। रूसी पुलिस ने इस अवसर पर असाधारण सफलता प्राप्त की थी। किन्तु उसको सही परिस्थिति का बहुत समय पश्चात् उस समय ज्ञान हुआ जब क्रांति की समाप्ति पर क्रान्तिकारियों को पुलिस की मिसलें देखने का सुअवसर प्राप्त हो चुका। उस समय ज्ञात हुआ कि जोज़ेफ़ की गिरफ्तारी केवल इत्तफ़ाकिया न थी, न ही पुलिस ने अचानक उसके रहने का गुप्त स्थान जान लिया था। बल्कि ज़ार काल में पुलिस का प्रबंध अत्यधिक व्यवस्थित था। जिस समय जोज़ेफ ने अपना कार्य क्षेत्र तफ़लस से बातूम को बदल दिया तो स्थानीय पुलिस ने अपना एक कर्मचारी पास वाले होटल में दाखिल कर दिया जो इस क्रान्तिकारी की प्रत्येक गति-विधि का अवलोकन करता रहता था।

डेढ़ साल क़ैद रहने के बाद जोज़ेफ़ को तीन वर्ष के लिए

साइबेरिया में कालेपानी भेज दिया गया। निर्वासितों की जो लम्बी श्रेणी साइबेरिया भेजी जाती थी, वह प्रसन्नता पूर्वक उस में सम्मलित हो गया। कई हजार मील की पैदल यात्रा करनी पड़ती थी। अन्य व्यक्ति होता तो अपने भयानक भविष्य को देख कर दुःख से अधमरा-सा हो जाता। किन्तु नवयुवक जोजेफ को इस बात का हर्ष एवं गौरव था कि अब इस सम्मान को पाकर वह भी अपने अन्य साथियों जैसा हो गया। भविष्य में वह भी गर्व के साथ कह सकेगा कि मैं भी निर्वासित की कठोर परीक्षा में उत्तीर्ण हो चुका हूं।

पूर्वी साइबेरिया के इस छोटे-से ग्राम में जहां क्रांतिकारियों को भेजा गया था एक ऐसी घटना हुई जिसके विषय में रूस के भावी डिक्टेटर ने कई अवसरों पर कहा है कि यही वह घटना थी जिसने उसके जीवन पर अपूर्व प्रभाव डाला। वह घटना यह थी कि यहां उसकी मुलाक़ात अपने गुरू लेनिन से हो गई। स्टालिन ने उसका वर्णन अपने शब्दों में इस प्रकार किया है—

"लेनिन से मेरी पहली मुलाक़ात सन् १९०३ में व्यक्तिगत रूप से नहीं, अपितु, पत्र द्वारा हुई थी। उस मुलाकात की अमिट याद मेरे हृदय में अभी तक शेष है। मुझे साइबेरिया निर्वासित कर भेज दिया गया था। वहां मुझे लेनिन के क्रांतिकारी आन्दोलन के अध्ययन के लिये अच्छा अवसर प्राप्त हो गया। वैसे तो मैं गत शताब्दी के अन्तिम दिनों से ही उसके आन्दोलन को देखता चला आता था, लेकिन जब मैंने सन् १९०१ से जब कि 'आकरा' पत्र आरम्भ हुआ था—इस आन्दोलन को देखा तो बड़ा आश्चर्य हुआ। मुझे ज्ञात हुआ कि वास्तव में वह कोई असाधारण व्यक्ति है। मेरी दृष्टि में वह केवल एक श्रेणी का नेता ही नहीं था। यदि मैं उसका मुक़ाबला

अपनी श्रेणि के अन्य नेताओं से करूँ तो कहना पड़ेगा कि वह उन सबसे बढ़-चढ़ कर था।"

मजे की बात तो यह थी कि इस छोटे से ग्राम में उसकी प्रत्येक बात पर निगरानी रक्खी जाती थी। जो पत्र वह लिखता अथवा जो पत्र उसके पास आता, वह सब स्थानीय पुलिस की पड़ताल के पश्चात् इधर उधर होने पाता था। फिर भी वह किसी न किसी प्रकार लेनिन के साथ पत्र व्यवहार करने का अवसर पैदा कर ही लेता था। इस समय स्टालिन गुप्त क्रान्तिकारी आन्दोलन का केवल एक छिपा सिपाही था। वह साम्यवादी श्रेणि के संगठित रूप से बहुत दूर था। यही कारण था कि स्टालिन सीधे तौर से लेनिन के नाम पत्र लिखने का भी साहस न कर सकता था।

उसने अपनी चिट्ठी एक ऐसे व्यक्ति के नाम भेजी जो लेनिन का मित्र था और लंदन में रहता था। युवावस्था का यह लेख बड़े उत्तेजनापूर्ण शब्दों में लिखा गया था। उससे कुछ पंक्तियां नीचे उद्धृत की जाती हैं।

"लेनिन उस पर्वत के समान है जिसकी चोटी अन्य पर्वतों से ऊँची है। वह वीरों में ऐसा वीर है, जो युद्ध से कभी नहीं डरता। वह अपनी श्रेणी को निर्भयतापूर्वक उस रास्ते पर ले जा रहा है जिस पर उस से पूर्व किसी रूसी क्रान्तिकारी को पग धरने का साहस भी नहीं हुआ।"

साइबेरिया में बन्दियों को अपने पत्र का उत्तर खुफिया पुलिस की मार्फत प्राप्त करने में महीनों लग जाया करते थे। इस पत्र को गए कई मास गुजर गए। एक दिन स्टालिन के नाम दो चिट्ठियां प्राप्त हुईं। एक उस लन्दन-स्थित मित्र की और दूसरी स्वयं लेनिन की थी। लेनिन द्वारा लिखित पत्र संक्षिप्त था, किन्तु वह क्रियात्मक एवं दूरदर्शितापूर्ण शिक्षाओं

से पूर्ण था। उसमें निर्वासित अज्ञात कर्मचारियों के लिये बहुत सी हिदायतें अङ्कित थीं। इस पत्र ने जोज़ेफ को साधारण सिपाही के दर्जे से निकाल कर अफ़सर की पदवी तक पहुँचा दिया। अन्यथा कोई कारण न था कि लेनिन उस पत्र में पार्टी के पिछले कार्य्यों पर इतनी कड़ी नुकताचीनी करता और प्रभावपूर्ण एवं स्पष्ट शब्दों में उसके भावी उद्देश्यों पर विवाद करता।

इस प्रकार की चिट्ठी किसी गुमनाम सिपाही को हरगिज़ नहीं लिखी जा सकती थी। इस प्रकार का विचार-विनिमय किसी उच्चाधिकारी के साथ ही सम्भव हो सकता था। इसके कई वर्ष बाद तक जब कभी स्टालिन इस प्रथम पत्र का ज़िकर करता तो वह हमेशा इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया करता था—

"सभी क्रान्तिकारियों के समान मैंने भी इस पत्र को पढ़ कर जला दिया था कि कहीं वह अन्य किसी व्यक्ति के हाथ न पड़ जावे। किन्तु मुझे इस बात के लिये सदैव खेद रहेगा कि मैंने इस अवसर पर भी एक साधारण नियम का पालन किया। यद्यपि उचित यह था कि मैं उस नियम की अवज्ञा करके भी उस पत्र को अपने पास रखता।"

जोज़ेफ़ की गिरफ्तारी और दण्डाज्ञा १६०२ ई० में हुई थी। उसे साइबेरिया तीन वर्ष के लिये भेजा गया था। लेकिन वह डेढ़ वर्ष में ही स्वतंत्र हो गया। यह बाद में पता चला कि उसे साइबेरिया के अकेटसक प्रान्त के जिस छोटे से नवाज़ा ओदा ग्राम में रक्खा गया था, वह वहां से ग़ायब हो गया।

यह वह समय था जब इस पार्टी के दो भाग हो चुके थे। एक का नाम बोलशेविक प्रसिद्ध था और दूसरी का नाम मेनसेविक। स्टालिन ने निस्संकोच बोलशेविक दल पसन्द किया, जिसका नेता लेनिन था। परिणाम यह हुआ कि पार्टी की अगली

कांग्रेस में उसे प्रतिनिधि मनोनीत कर प्रोत्साहन दिया गया। इसी अवसर पर स्टालिन और लेनिन की पहली वास्तविक भेंट हुई। पार्टी की कांग्रेस का अधिवेशन सन् १९०५ में फिनलैण्ड के टैमर फोर्स नामक स्थान पर हुआ और स्टालिन उसका एक प्रतिनिधि था। एक संक्षिप्त लेख में स्टालिन ने लेनिन की स्मृति में लिखा है कि मैं बड़ी उत्सुकता से इस मुलाकात की प्रतीक्षा कर रहा था। स्टालिन का अनुमान था कि लेनिन एक लम्बा चौड़ा तथा शक्तिशाली व्यक्ति होगा, जिसकी प्रधानता के कारण ही सब लोग उसका सन्मान करते होंगे। वह बड़े २ पार्टी-नेताओं के अनुसार उस समय हाल में प्रवेश करेगा, जब प्रत्येक व्यक्ति अपने स्थान पर बैठ चुका होगा। उसके वहां आगमन पर नेताओं में बिजली जैसा प्रभाव होगा। उस समय तुमुल करतल-ध्वनि के बीच उसका इस प्रकार प्रवेश होगा जैसे नाटक का कोई पात्र स्टेज पर आता है। कांग्रेस का प्रत्येक व्यक्ति उसे देखते ही उठ कर खड़ा हो जावेगा और सब लोग उसे सादर नमस्कार करेंगे।

लेकिन क्रियात्मक रूप से जो हुआ वह यह था कि स्टालिन—जो कांग्रेस के अधिवेशन के आरम्भ होने से पर्याप्त पहले पहुँच कर भावी प्रोग्राम के लिये तय्यार रहना चाहता था—जब अवसर पर पहुँचा तो क्या देखता है कि उस समय तक केवल चन्द व्यक्ति ही आए थे और वह सभी सरगर्मी के साथ वाद-विवाद कर रहे थे। उन्हीं में एक सीधा-साधा छोटे क़द का व्यक्ति भी बैठा हुआ था, जिसके सिर के बाल उड़े हुए थे। वह रूप रंग से किसी छोटी सी फर्म का थोड़ा वेतन पाने वाला एजेन्ट जान पड़ता था। वास्तव में वह साधारण रूप रंग वाला व्यक्ति ही लेनिन था।

५

सन् १९०६ की क्रांति में भाग

रूसी क्रान्तिकारी लोग अत्यन्त शान्ति तथा धैर्य के साथ गुप्त रूप से काम किया करते थे। अत: उन का काम लम्बा और थका देने वाला तथा प्राय: जमीन के नीचे किया जाता था। इसीलिये उसका परिणाम भी आगे चल कर निश्चित रूप से इच्छानुसार निकला। रूस-जापान युद्ध में जब रूस की हार हुई तो एक नियत समय पर देश के प्रत्येक भाग में क्रान्तिकारी आन्दोलन इस प्रकार आरम्भ हो गए मानो किसी ने अपने विशेष निर्देश से उन सबका आरम्भ किया हो।

यदि ध्यान-पूर्वक देखा जावे तो सन १९०५ की रूसी-क्रान्ति जिसे जार के शासन ने घोर अत्याचार के बल पर दबाया था, अक्तूबर १९१७ की क्रान्ति का एक आदर्श-पूर्ण रूप थी। नाट्यकारों के शब्द में दूसरी क्रान्ति को यदि 'तमाशा' कहा जा सके तो प्रथम को उसकी 'रिहर्सल' कहना अनुचित न होगा। लेनिन और ट्रॉट्स्की दोनों सेंट पीटर्सबर्ग में थे। वहां रूसी कार्य-कर्त्ताओं की प्रथम सोवियट (चुनी हुई सभा) स्थापित हो चुकी थी। उधर स्टालिन दक्षिणी रूस में लगा हुआ था।

स्टालिन की कार्य-पद्धति के सम्बन्ध में यह बात विशेषत: कहनी पड़ती है कि जब १९०५ की क्रान्ति का आरम्भ हुआ तो

उसके प्रदेश में वह सबसे अधिक देर तक कायम रही। किन्तु देश के शेष भागों में अत्याचारी शासन क्रान्ति की लपटों को ठंडा करने में शीघ्र ही सफल हो गया। स्टालिन के कार्य-क्षेत्र की प्रचन्ड क्रान्ति को अन्त में १९०७ ई० में जारशाही दबाने में सफल हो सकी। स्टालिन ने अपने इस कार्य के विषय में निम्न पंक्तियों का उल्लेख किया है—

"१९०५ से १९०७ तक पार्टी ने मुझको बाकू नामक स्थान पर नियुक्त किया। यहां काम करते हुए मैंने दो वर्ष बिताए। मैंने वहां रह कर क्रान्तिकारी पद्धतियों का अध्ययन किया। यहीं पर मैंने कार्य-कर्त्ताओं के साथ मिल कर यह भी मालूम किया कि जनता की बड़ी २ संस्थाओं का नेतृत्व किस प्रकार किया जाता है। इस जगह मुझे पहली बार सरकारी क्रोधाग्नि का लक्ष्य बनना पड़ा। हां, इसके बाद मैं इस योग्य हो गया कि अपने आपको वास्तविक अर्थों में क्रान्ति का कार्य-कर्त्ता मान सकूं।" इन चन्द वाक्यों में क्रान्तिकारी कार्यों का संक्षिप्त वर्णन कर दिया गया है। लेकिन इस कार्य का विस्तृत हाल 'स्टवोनाफ़' ने अपनी आत्म-कथा में लिखा है। इस व्यक्ति का नाम उस समय 'लुइस पना' था। बाद में उसने कई कल्पित नाम धारण किये। किन्तु संसार उसे स्टवोनोफ़ के नाम से ही अधिक जानता है। यही वह व्यक्ति था जो लेनिन बन कर रूस का निर्वासित बन्दी रहा है। स्टवोनाफ़ का दिया हुआ विस्तृत वर्णन दक्षिणी रूस के क्रान्तिकारियों के उस कार्य पर पर्याप्त प्रकाश डालता है, जो स्टालिन के नेतृत्व में हुआ था।

स्टवोनोफ़ लिखता है "सबसे प्रथम वस्तु जिसकी हमको आवश्यकता थी वह बन्दूकें और कलदार तोपें थीं। दक्षिणी रूस की क्रान्तिकारी कौंसिल के आधीन—जिसका नेता उस

समय स्टालिन था—मैंने डेनमार्क के शास्त्रागार से बात चीत की। वहां ऐसी कलदार तोपें तयार होती थीं, जिन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाया जा सकता था। मेरी यह बात चीत हम्बर्ग की एक कोठी के द्वारा हुई। इसके बाद उनका एक प्रतिनिधि डेनमार्क के कारखाने की ओर से हम्बर्ग में मुझसे मिला। उसको मैंने बतलाया कि मैं 'ग्रीष्म-प्रधान कटिबन्ध' की सेना का प्रतिनिधि हूँ। कुछ राइफिलें और उनका बारूद शरौद की फैक्टरी से प्राप्त किया गया और अधिक अच्छी राइफिलें बेल्जियम के एक कारखाने से मंगाई गई। उनके लिये गोली बारूद कार्ल्स रो के सरकारी मैगजीन से मांगी गई। 'कार्ल्स रो' में पहुँच कर मैंने अपने आपको बेल्जियम का एजेन्ट प्रदर्शित किया और इस विषय में मुझ पर कोई संदेह नहीं किया गया। इस प्रयत्न में मुझे कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। एक अवसर पर कारखाने के प्रबंधक ने मुझको बतलाया कि यहां एक सरकारी रूसी दल आया है और आग्रहपूर्वक मुझसे मिलना चाहता है। सौभाग्य-वश कोई विशेष विघ्न उपस्थित नहीं हुआ। बात यह हुई कि रूसी अफसर मुझ से बिल्कुल अपरिचित थे। वह मेरे कार्य में बाधक न होकर सहायक हुए और मुझको उन्होंने सामान खरीदने में सहायता देने का वचन दिया। परन्तु सबसे बड़ी कठिनाई उपस्थित हुई युद्ध सामग्री को रूस ले जाने की।

"मैं हालैण्ड, बेल्जियम, इटली और फ्रांस के विभिन्न बन्दरगाहों में गया और वहां के समाजवादी नेताओं से भी मिला। किन्तु मेरी कठिनाइयां दिन प्रति दिन बढ़ती ही गईं। जिस जगह मैं जाता और जिस व्यक्ति से भी मिलता, वह यही कहता था कि आपकी सोची हुई योजनाएं अक्रियात्मक हैं। अन्त में

में मैसीडोन के क्रान्तिकारियों की सहायता से बल्गेरिया राज्य से इस बात की अनुमति प्राप्त करने में सफल होगया कि अपना सामान वर्ना लेजा सकूं। वहां से मैं इन वस्तुओं को अरमन विद्रोहियों की सहायता से आर्मीनिया भेजने को समर्थ हुआ, जहां उस समय तुर्कों का राज्य था।"

"मैं इस सामग्री को जहाज पर लाद कर रूसी तट पर ले जाना चाहता था, जहां हमारे साथी क्रान्तिकारी नावें लिये हमारी राह तक रहे थे। किन्तु अब यह कठिनता उत्पन्न हुई कि बल्गेरिया में ऐसा स्टीमर नहीं खरीदा जा सका, जिस पर यह माल लाद कर भेजा जा सकता। विवश हो मुझे फ्यूम (इटली) जाना पड़ा, जहां मैंने तीस हजार फ्रांक में एक अमरीकन जहाज़ की सेवाएं प्राप्त कीं। मैंने इस अवसर पर सावधानतापूर्वक अपने व्यक्तित्व को पूरी तरह से छिपाये रक्खा। मै प्रत्येक अवसर पर अपने आपको मकदूनिया का एक व्यापारी प्रगट करता रहा। इस प्रकार हम युद्ध सामग्री को जहाज़ पर लाद कर रूस के तट की ओर रवाना हुए।"

इन उद्धरणों को पढ़ कर उन युद्ध-घटनाओं का चित्र उपस्थित हो जाता है जिनमें से सन् १६०५ के क्रान्ति के व्यवस्थापकों को गुजरना पड़ा था। तथापि यह क्रान्ति सफल न हुई। रक्त की नदियां बह चलीं, किन्तु उद्दिष्ट स्थान उतना ही दूर रहा जितना कि वह पहले था।

शनैः २ जब जार की सरकार १६०५ के क्रान्तिकारी प्रभावों से विमुक्त हुई तो उसने रूसी क्रान्तिकारियों के विरुद्ध एक भयानक युद्ध आरम्भ कर दिया। इस समय सहस्रों तथा लाखों आदमी निर्वासित करके साइबेरिया भेज दिये गए। कुछ व्यक्ति ऐसे भी थे जो जान बचा कर विदेशों में जा छिपे। इस

समय ऐसा प्रतीत होता था कि रूस का स्वतंत्रता आन्दोलन सदा के लिये समाप्त हो जाने वाला है।

यह वह समय था जब बोल्शेविक पार्टी ने पुराने निहलिस्टों के उन्हीं कठोर उपायों का प्रयोग किया, जिनको कुछ वर्ष पूर्व लेनिन ने अत्यन्त बुरा बतलाया था। रूस के बड़े २ नगरों में बम फटने लगे। अनेक गवर्नर, पुलिस अधिकारी और जार सरकार के अन्य प्रतिनिधि अधिकारी रूस के इन क्रान्तिकारियों की कार्यवाहियों का शिकार हुए। यदि उस समय की पूर्ण रक्त-मयी सूची को प्रस्तुत किया जावे तो वह पर्याप्त लम्बी होगी।

जिन व्यक्तियों ने स्टालिन के जीवन-वृत्तान्त लिखे हैं, इस विषय में वह सब सहमत हैं कि उसने इन आतङ्क कार्यों में महत्वपूर्ण भाग लिया था। लेकिन इसके साथ ही वह सब इस बात से भी सहमत हैं कि उसके हाथ से कभी कोई ऐसा बम नहीं फैंका गया, जिससे जारशाही का कोई ऐसा अधिकारी मारा गया हो, जिसके मारे जाने का निर्णय दल की ओर से किया जा चुका था। उसके कार्य की परिधि एक बिल्कुल ही विभिन्न क्षेत्र तक सीमित रही।

इसी समय दल की ओर से बहुत बार देश के विभिन्न भागों में सरकारी कोष और कर-कार्यालयों पर व्यवस्थित आक्र-मण किये गए। ऐसा ही एक आक्रमण तफलिस में भी हुआ। इसका स्पष्टीकरण उस समय के दो समाचार पत्रों में आज तक सुरक्षित है, जिनके उद्धरण यहां दिये जाते हैं—

रूस के सरकारी सम्वाददाता ने निम्न समाचार प्रका-शित किया था—

"तफलिस नगर के मध्य में एरी वरन चौकमें २५ जून, १९०७ को ऐसे समय १० बम फटे, जबकि ट्रैफिक जोरों पर था। यह

सब धड़ाके क्रमशः थोड़े ही समय में हुए। एक बम के बाद दूसरा बम फटने में जो समय लगता उसमें बन्दूकों और पिस्तौलों के चलने की आवाजें भी सुनाई देती थीं। टूटे हुए कांच के टुकड़े और ऐसी ही दूसरी वस्तुएं बड़े परिमाण में फैली हुई पाई गईं। पुलिस शीघ्र ही घटना-स्थल पर पहुंच गई।"

दूसरी रिपोर्ट निम्न लिखित है—

"पुलिस ने बड़ी खोज के पश्चात् मालूम किया है कि आक्रमणकारियों की इच्छा एक गाड़ी लूटने की थी, जिस पर सरकारी कोष था। आक्रमणकारी ३४१००० रूबल उड़ा ले जाने में सफल भी हो गए।"

यह एक पर्याप्त बड़ी राशि थी। किन्तु लेनिन की पार्टी को कार्य-सञ्चालन के लिये इससे भी अधिक धन का आवश्यकता थी। समाचार पत्र और पत्रिकाएं छापने और पार्टी के सदस्यों के विभिन्न स्थानों में भ्रमण करने पर अगणित रुपया व्यय होता था क्रान्तिकारी लोग यह भली प्रकार समझते थे कि रूस की कई करोड़ की जनसंख्या में जागृति उत्पन्न करने के लिये लाखों ही नहीं वरन् करोड़ों रुपये की जरूरत है।

रूस की सारी पुलिस दृढ़ क्रान्तिकारी ड्यूड को तलाश करती फिर रही थी, जिसके साहस और निर्भयता की यह दशा थी कि वह दिन दहाड़े नगर के मध्य में सरकारी कोष लूट कर ले जाने में सफल हो गया। उन्होंने उसे पाने के लिये देश का कोना २ छान मारा। उसकी खोज में कोई प्रयत्न बाकी न छोड़ा। किन्तु ईश्वर जाने, ड्यूड पृथ्वी में समा गया या उसे आकाश निगल गया। वह उसका कहीं भी पता न पा सके।

इस बात का कई वर्ष पश्चात् पता लगा कि स्टालिन ने अपने-युद्ध-संघर्षमय जीवन में जो बहुत से कल्पित नाम धारण

किये हुए थे उनमें से ड्यूड भी एक था। रूसी पुलिस इस समस्या को एक लम्बे समय तक हल न कर सकी कि वह क्यों उस व्यक्ति को गिरफ्तार करने में असमर्थ रही, जो उन तलाशियों के समय स्टालिन के नाम से प्रसिद्ध था। स्टालिन क्रान्ति-काल में ६ बार गिरफ्तार हुआ। दो बार अपने मित्रों के द्रोह से और चार बार केवल अवसर के परिणाम स्वरूप। पुलिस का यह दावा था कि वह अपनी व्यवस्था के बल पर उसे पकड़ सकती है। किंतु उसको इस मिथ्या विचार को बहुत शीघ्र अपने दिमाग से निकाल देना पड़ा। आखिर कौनसा साधन था जिससे स्टालिन अपने आपको इतना गुप्त रख सका। यह स्पष्ट है कि स्टालिन किसी समय धार्मिक शिक्षा प्राप्त कर चुका था। अतः यदि ऐसी कोई परिस्थिति उत्पन्न होती तो वह पादरी के वेश में किसी समाधि-स्थान में आश्रय प्राप्त कर लेता। पुलिस को स्वप्न में भी यह विचार नहीं हो सकता था कि वह भीषण क्रान्तिकारी कभी ऐसा सौम्यमूर्ति पादरी भी हो सकता है, जिसका जीवन साक्षात् अग्नि की चिंगारी था।

बम बराबर फटते चले गए। पुलिस ने उस भीषण क्राँति-कारी को खोजने के लिये—जिसका हाथ इन षड्यंत्रों के मूल में था—देश का चप्पा २ छान मारा, किन्तु वह उसे गिरफ्तार करने में सफल न हुई। बड़ी कठिनता यह थी कि पुलिस के अधिकारियों को इस व्यक्ति का नाम भी ज्ञात न था। वह आश्चर्यजनक फुर्ती और अभ्यास के कारण अपने प्रकट रूप में परिवर्तन कर लेता था। अतः उसके सही हुलिये से कोई भी परिचित न था। यदि पुलिस को अत्यन्त खोज के पश्चात् कुछ ज्ञात हुआ तो केवल यही कि अपने साथियों में इस व्यक्ति का नाम 'कोबा' प्रसिद्ध है। किंतु यह हृढ़व्रती कोबा कौन है ? यह भेद न खुल सका।

उस जमाने के पुलिस के विवरणों में दो भीषण और विकट क्रान्तिकारियों के कार्यों का उल्लेख है। उनमें से एक का नाम ड्यूड और दूसरे का कोबा था।

तफ़लस की पुलिस ड्यूड और कोबा नामों का सम्बन्ध दो प्रथक २ व्यक्तियों से समझती थी। वास्तव में बाल्यकाल के सोसो ने ही अपने भावी जीवन में इन दोनों नामों को अपने लिये पसन्द किया था। यह दोनों का नाम स्टालिन ने ही अपने आन्दोलन के हित के लिये रक्खे थे।

६

विश्वासघाती नेता के चुंगल में

रूसी पुलिस ने सन् १६०८ में कुछ क्रान्तिकारियों को गिरफ्तार किया, जिनमें नजरेज नामक लगभग तीस वर्ष का एक युवक भी था। पुलिस को इस बात का विश्वास था कि यह व्यक्ति कोई कल्पित नाम भी रखता है किन्तु भारी प्रयत्न करने पर भी वह इस बात को प्रमाणित न कर सकी। पुलिस की मिसलों में इस से पूर्व नजरेज नामक किसी व्यक्ति का उल्लेख न था। अतः बड़े २ प्रयत्न करने पर ही वह उस तीन वर्ष के लिये निर्वासन-दण्ड ही दिला सकी। अभियुक्त को मास्को के उत्तर में वलागड़ा के उस जेलखाने में भेज दिया गया जहां पहली बार के दण्डित बन्दी रक्खे जाते थे।

पुलिस को क्या पता था कि वह व्यक्ति जिसको वह राजनैतिक अपराधी के नाते नया खयाल करती थी, वास्तव में वह भीषण क्रान्तिकारी है जिसे वह गत दस वर्ष से खोजने में संलग्न थी; औ तफलस में सोसा के नाम से प्रसिद्ध था और कोबा और ड्यु ड जिसके दूसरे नाम थे। इसके एक वर्ष पश्चात् ही वह फिर सेंट पीटर्सबर्ग जा पहुँचा। वह किसी प्रकार वलोगड़ा के जेलखाने से भाग निकला था। अब वह शीजीको के कल्पित नाम से रहने लगा। उसके पहले के फोटो में—जो पुलिस के

कब्जे में था—उसकी खप्पेदार दाढ़ी और ढलकी हुई मूछें दिखलाई गई थीं। शीजीको छोटी २ मूछें रखता था, जिसके छोरों को मोम लगा कर वल दे लिया करता था। यह व्यक्ति सेंट पीटर्स बर्ग में एक किराये के मकान में रहता था। वह एक दिन वहां से चल कर बातूम पहुँचा। यह वही स्थान था जहां पुलिस ने उसे पहले नजरेज के नाम से गिरफ्तार कर तीन वर्ष का निर्वासन-दण्ड दिया था। उसके बातूम पहुँचते ही क्रान्तिकारियों में दबे हुए आन्दोलन की अग्नि पुनः प्रज्वलित हो गई। पुलिस ने नेता की खोज आरम्भ की और अन्त में शीजीको पकड़ा गया। उसने अपने कागजात दिखलाकर पुलिस को यह विश्वास दिलाने का बड़ा भारी यत्न किया कि वह एक अन्य ही व्यक्ति है, किन्तु पुलिस ने जान लिया कि यह वही व्यक्ति है जो पहले नजरेज नाम से दण्डित हुआ था। इस बार उसे ६ वर्ष के कठोर कारावास का दण्ड दिया गया।

स्टालिन ऐसा मनुष्य न था जो अपनी कैद का समय चुपचाप निकलने देता। वह कुछ वर्ष पीछे फिर जेल से भाग निकला और सीधा सेंटपीटर्सबर्ग पहुँचा। वहां उसका इरादा अपना एक नया नाम धारण कर उसी नाम के कागजात एकत्रित करने का था। किन्तु मुख्य स्थान पर पहुँचते ही वह पुनः पकड़ा गया और दण्डित हुआ। उसने चौथी बार फिर भागने की योजना बनाई और उस योजना को वह कार्य रूप में परिणत करने में सफल भी होगया।

सन् १९१२ में पार्टी की कांग्रेस का अधिवेशन प्रेग में होना निश्चित हुआ। स्टालिन सीधा वहीं पहुँचा। अब तक स्टालिन ने अपने जीवन में आश्चर्यजनक कार्य कर दिखलाए थे। अतः आन्दोलन के समर्थकों ने उसका अपूर्व स्वागत किया और उसे

केन्द्रीय समिति का सदस्य बना कर सम्मानित किया। उसके जीवन-काल की पिछली सफलता को दृष्टि में रखते हुए यह कहा जा सकता था कि वह समिति के अन्य सदस्यों की भांति बाहर रह कर भी काम कर सकता था। किन्तु पार्टी के नेताओं में वही ऐसा व्यक्ति था जो अङ्गरेजी, फ्रेंच और जर्मन भाषाओं को नहीं जानता था। अतः यह आवश्यक समझा गया कि वह कुछ समय तक रूस से बाहर रह कर कोई विदेशी भाषा सीखे। किन्तु उसमें विदेशी भाषाएं न जानने की जो त्रुटि थी उसका समाधान इस प्रकार हो जाता था कि वह दक्षिणी रूस की सभी भाषाओं को उनकी विविध शाखाओं सहित जानता था।

इसके अतिरिक्त स्टालिन देश के बाहर जाना पसन्द भी नहीं करता था। वह कहता था कि "मैं बाहर रह कर काम नहीं कर सकता। कैसा भय उपस्थित हो और मेरे विविध नामों के आधार पर कितने ही गिरफ्तारी के वारंट जारी हों तो भी मैं इस देश में रह कर ही काम करूंगा।" वह भली भाँति जनता था कि यदि इस बार पकड़ा गया तो साइबेरिया में २० वर्ष का कालापानी प्राप्त होगा। यह सब कुछ होते हुए भी स्टालिन सभी प्रकार के भयों की उपेक्षाकर रूस की सीमा के अन्दर ही रहा।

जो कार्य्य इस नवयुवक क्रान्तिकारी को सौंपा गया, वह उसके लिये उत्साह-प्रद था। प्रबन्धक समिति के सदस्य के रूप में वह सेंट पीटर्स बर्ग पहुँचा। वहां उसे पार्टी के पत्र परावदा का प्रबन्ध सौंपा गया। इस पत्र को उस समय के पड़ताल विभाग से स्वीकृत करा कर उसे एक अहानिकारक पत्र के रूप में प्रकाशित करना था। यह समझा जाता था कि स्टालिन इस कार्य्य को उत्तम ढंग से पूरा कर सकेगा।

स्टालिन ने आइवानोविच के नाम से प्रवेश-आज्ञा(decla-

ration) प्राप्त कर ली और रूसी सीमामें पहुँच गया। कुछ सप्ताह पश्चात् 'पराबडा पत्र' का प्रकाशन आरम्भ हो गया। उस समय स्टालिन का नाम सेंट पीटर्सबर्ग में पहले बार सुनने में आया। वास्तव में यह नाम कुछ नवीन न था। गर्जस्तानी भाषा में जो अर्थ जोगाशवली के हो सकते हैं वही रूसी भाषा में स्टालिन के हैं। 'जोगा' और 'स्टाल' दोनों शब्दों के अर्थ लोहा हैं। सेंट पीटर्सबर्ग पहुँच कर स्टालिन ने अपने लिये यह नया क्रियात्मक नाम पसन्द किया। यह बात उल्लेखनीय है कि स्टालिन ने क्रान्ति-काल में जितने भी कल्पित नाम धारण किये उनमें से यही ऐसा नाम एक है जिसे उसने क्रान्ति की सफलता के पश्चात् भी धारण किये रक्खा।

रूसी पुलिस ने अप्रैल १६१२ में स्टालिन को आइनोविच के कल्पित नाम से गिरफ्तार किया और उसे पांचवी बार जेल भेजा गया। किन्तु वह जो नाटक सदा खेलता रहा था, उसी को उसने इस बार भी खेला। क्यों कि आइनोविच के रूप में वह ऐसा अभियुक्त था जो पहिली बार ही दंडित हुआ था। इसलिये उसे केवल तीन वर्ष का ही निर्वासन-दंड मिला। यह दंड उस जैसे अपराधियों के लिये साधारण था। किंतु जैसा कि उसने पहले भी कई बार किया था, वह इस बार भी शीघ्र ही कारावास से मुक्त हो कर आगया। वह अप्रैल में पकड़ा गया था और सितम्बर में लेनिन से भेंट करने कराको जा पहुँचा। सम्भव है कुछ व्यक्ति सोचते होंगे कि इस प्रकार पांचवीं बार पकड़े जाने के पश्चात् और वहां से भाग आने में सफल होकर उसको निरन्तर तलाशियों और गिरफ्तारियों से बचने के लिये रूस के बाहर किसी स्थान पर चले आना चाहिये था। लेकिन ऐसा नहीं, वह ऐसा व्यक्ति न

था जो कठिनाइयों से घबरा उठता। लेनिन के नये आदेश प्राप्त करने के उद्देश से वह कुछ दिन कराको रहा। इसके पश्चात् वह फिर सेंट पीटर्सबर्ग आ पहुँचा। अब उसको पार्टी का जो कार्य्य सौंपा गया, उसके लिये अधिक राजनैतिक योग्यता की आवश्यकता थी। उन लोगों ने निश्चय किया कि रूसी पार्लियामेन्ट (डूमा) के निर्वाचन में भाग लिया जावे। अतः यह दल अगले निर्वाचन में सोलह सीटें प्राप्त करने में सफल हो गया। लेनिन ने स्टालिन को पार्टी की पार्लमेन्टरी समिति का अध्यक्ष नियुक्त कर दिया।

इस पार्लमेंटरी समिति में अत्यन्त कड़ा अनुशासन था। पार्टी के जितने सदस्य डूमा में निर्वाचित हुए, उन सब का कर्तव्य था कि वह अपनी वक्तृताएं पहले स्टालिन को दिखला लिया करें अथवा उसकी लिखी हुई वक्तृताएं अपनी ओर से पार्लमेंट में पढ़ कर सुनाया करें। पार्टी से सम्बन्धित डूमा के सदस्यों में एक अत्यन्त योग्य व्यक्ति रोमान मालीनोस्की भी था। लेनिन ने स्टालिन का ध्यान उसकी ओर विशेष रूप से आकर्षित किया था और कहा था कि पार्टी में इस व्यक्ति का भविष्य उज्जवल दृष्टिगोचर होता है। वह न केवल एक अच्छा व्याख्याता था, अपितु प्रत्येक प्रकार से विश्वसनीय भी था और सदैव हृदय से क्रांति के पक्ष का पोषण करता रहता था।

लेनिन जैसे नेता की सिफारिश के पश्चात् यह असम्भव था कि स्टालिन माली नोस्की को अपना घनिष्ट मित्र न बनाता। दोनों में सच्ची मित्रता हो गई। परिणाम यहां तक हुआ कि वह एक ही कमरे में रहने लगे। रूसी पार्लमेंट का सदस्य चाहे किन्हीं विचारों का व्यक्ति क्यों न हो, उसका निवास-स्थान प्रत्येक प्रकार से सुरक्षित समझा जाता था। ऐसे सदस्यों को रूस में विशेष

अधिकार प्राप्त थे। पुलिस इन लोगों के घरों की तलाशी डूमा की अनुमति से ही ले सकती थी और उनकी गिरफ्तारी एक कठिन वस्तु थी। नई परिस्थिति में कार्य्य बड़े सुन्दर ढंग से जारी रहा।

अब पुलिस ने स्टालिन के कार्य्यों में कोई हस्तक्षेप नहीं किया। इसलिये वह अपनी सोची हुई योजनाओं को कार्य-रूप में परिणित करने में संलग्न रहा। परावडा पत्र प्रतिदिन प्रकाशित होता रहा और उसका प्रचार बराबर बढ़ता गया। पार्टी के सदस्य प्रसन्न थे कि उनका एक पत्र बिना किसी रोक टोक से खुले रूप में बिक रहा है। पार्टी के जो सदस्य डूमा में बैठते थे, उनका अनुशासन भी पूर्ण था। स्टालिन लेनिन को कार्य की रिपोर्ट बराबर भेजता रहता था। पार्टी की शक्ति बढ़ती जाती थी। पार्टी को सन् १६०५ की असफल क्रान्ति में जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था, वे कठिनाइयां अब दूर होती जाती थीं।

लेकिन इस समय जब कि स्टालिन अपने आपको प्रत्येक प्रकार से सुरक्षित समझता और भविष्य की स्थिति को आशापूर्ण दृष्टि से देखा करता था, उस पर एक असाधारण आपत्ति आई। एक दिन खुफ़िया के दो अधिकारी उसके मकान पर आए और उन्होंने उसे क़ैद कर लिया। स्टालिन ने ऐसे अवसर पर बड़े साहस का परिचय दिया। उसने पुलिस से कहा "मैं नितान्त निर्दोष हूँ। तुम मेरे कागजात देख सकते हो। मैंने कभी कोई अपराध नहीं किया।" किन्तु पुलिस-ईन्स्पेक्टर सारी बातें सुन कर बड़े जोर से हँसा। उसने एक पत्रांश निकाल कर स्टालिन के सामने रख दिया।

स्टालिन ने आश्चर्यान्वित होकर देखा कि इस बार हस

की पुलिस बड़ी गहराई तक पहुँच चुकी थी। उसने बड़ी खोज-पूर्वक दूर तक के हालात मालूम कर लिये थे। इस पत्रांश पर स्टालिन के सभी कल्पित नाम सोसो, डयूड, कोबा, नजरेज, चीजीको, आइनोविच और स्टालिन साथ २ लिखे हुए थे। उस पत्र में प्रत्येक नाम के साथ यह भी अंकित था कि उसे कितना दंड मिला और दंड का कितना भाग उसने भुगता। स्टालिन को अब पता लगा कि वास्तविक कठिनाई किस वस्तु का नाम है। अब उसकी दशा निस्सन्देह कुछ दुर्बल सी होने लगी।

उसके साथ एक भीषण अपराधी जैसा व्यवहार किया गया और उसे निर्वासित कर जमने वाले उत्तरी सागर के तट से केवल १५ मील वेर बेका नाम के एक छोटे से गांव में रक्खा गया। यहां केवल चार पांच घर आबाद थे। यहाँ जिन अभागों को निर्वासित जीवन व्यतीत करना पड़ता था, उनका हाल राबिन्सन क्रूसो जैसा होता था। उन्हें प्रत्येक वस्तु का स्वयं प्रबन्ध करना पड़ता अन्यथा मृत्यु का ग्रास बनना पड़ता था। यदि कहीं से शिकार मार कर ले आवें तो खालें, अन्यथा भूखे ही मरें। पुलिस की एक विशेष टुकड़ी हर समय इन भीषण अपराधियों की देख भाल रखती थी। प्रगट रूप में वह स्वतंत्र थे, किन्तु वास्तव में पुलिस पग २ पर उनकी निगरानी करती रहती थी। गांव में बर्फ पर फिसलने वाली केवल एक गाड़ी थी और वह भी पुलिस के कब्जे में। यह निर्वासिन-स्थान आने जाने के साधनों से बिलकुल रहित था। जो बन्दी पांच बार भागने का साहस सफलता-पूर्वक कर चुका था, वह भी यहां से भागने का साहस नहीं कर सकता था।

स्टालिन आश्चर्य से सोचता था कि मुझे इस वन में कब तक रहना पड़ेगा। दस वर्ष रहना हो या ०० वर्ष रहना पड़े। इससे

दंड को भयंकरता में कोई अन्तर नहीं आता। इस भयानक निर्जन स्थान में जहाँ बारहों महीने बर्फ जमी रहती थी, बड़े से बड़े धैर्यवान् मनुष्य का धैर्य भी छूट जाता था। यदि कभी किसी अवसर पर ज़ार ने उसे क्षमा-प्रदान भी कर दिया तो उस से क्या लाभ ? उस समय तक स्टालिन की काया-पलट हो चुकेगी। यदि वह जीवित सकुशल संसार में वापिस भी आ गया तो उस समय वह बूढ़ा, दुर्बल और जर्जरीभूत हो जावेगा।

लेकिन जिनके भाग्य में जीवन हो, उन्हें साधारण कठिनाइयों से क्या खटका ? स्टालिन के सद्भाग्य ने उस का सदा साथ दिया था। अब की बार भाग्य ने फिर उसका साथ दिया। उस निर्जन बीहड़ स्थान में रहते हुए उसे कुछ मास ही बीते थे कि गत महायुद्ध के आरम्भ होने के समाचार उसके कानों तक पहुंचे। जिस समाचार से सारे संसार में आतंक फैल गया, स्टालिन को वह इस आधार पर आशाजनक ज्ञान पड़ा कि सम्भवतः इसी सिलसिले में क़ैद से निकलने की कोई सूरत निकल आवे।

स्टालिन जैसे विशुद्ध क्रांतिकारी की दिव्य दृष्टि युद्ध के विस्तृत क्षेत्र में रमी रहने लगी। उसने सोचा कि इस अवसर पर किसानों और मजदूरों में शस्त्र बांटे जावेंगे। इसके बाद यह प्रश्न उठेगा कि प्रजा-जन किसे अपना वास्तविक शत्रु समझें ? एक अनजान देश की सेना को जिससे उनका कोई झगड़ा न था अथवा इस देश के अधिकारियों को जिन्होंने उनकी स्वतंत्रता छीन रक्खी थी ? यही वह विचार था जिसने स्टालिन के हृदय में आशा-प्रदीप प्रज्वलित कर रक्खा था। उसने सोचा कि युद्ध का अन्तिम परिणाम कुछ भी क्यों न हो, निर्वासितों की अवस्था में आवश्य परिवर्तन होगा। यदि रूस हार गया तो देश में क्रान्ति

हो जावेगी। उस दशा में निर्वासितों की मुक्ति अवश्यक है। और यदि रूस विजयी हुआ तो भी क्रांति होगी। लोग अपने अधिकारों के लिये अनिवार्य रूप से संघर्ष करेंगे।

भूतकाल के इसदृढ़ क्रान्तिकारी को ध्रुवसागर के पास रहते हुए चार वर्ष बीत गये। सन् १९१७ की वसन्त ऋतु में यह समाचार इस हिमपूर्ण स्थान पर पहुंचा कि देश के छोर २ में क्रान्ति का साम्राज्य स्थापित हो गया और जार का शासन सदा के लिये समाप्त हो गया। नए शासन की घोषणा इस दूरवर्ती स्थान पर भी पहुंची, जिसका सन्देश यह था कि सभी राजनैतिक बन्दी मुक्त किये जावें।

स्टालिन को ध्रुव-प्रदेश के चार वर्ष—जहां ठंडक और भयानक रीछों का दौर दौरा था—चार शताब्दी जैसे प्रतीत हुए। किन्तु अन्त में उसके पिंजरे का द्वार खोल दिया गया।

वह मार्च, १९१७ में सेंट पीटर्स बर्ग पहुंचा और एक बार फिर परावडा पत्र का सम्पादन करने लगा। उसने सुदूर उत्तरी भाग में अपने चार वर्ष व्यतीत किये थे। इस बीच में उसकी सारी शक्ति और चुस्ती काफ़ूर हो चुकी थी। जिन चार *वर्षों में संसार एक परिवर्तन में से गुज़र रहा था और उसके साथी बड़े साहस के साथ पश्चिमी संसार में कार्य कर रहे थे,* वह बेकार रहने के लिये विवश था। इस निरन्तर की बेकारी और बलात् लादी हुई चुप्पी ने स्टालिन की प्रकृति में एक भारी अन्तर पैदा कर दिया। अब वह एक शान्त कार्य्य-कर्त्ता बन गया था।

इन चार वर्षों में उसे भूतकाल पर विचार करने का पर्याप्त समय मिला। कठिनता से कोई ही दिन ऐसा जाता होगा जिस दिन उसे यह प्रश्न विचलित न करता हो कि रूस की खुफ़िया पुलिस को मेरी वास्तविकता से वास्तव में किसने परिचित

किया ? परन्तु प्रत्येक क्षण इस प्रश्न पर विचार करते रहने पर भी वह किसी सन्तोष-जनक परिणाम पर न पहुँचा। वह सोचता था कि "पुलिस मेरी कल्पनाओं से भी बढ़ कर दक्ष पाई गई। मैं समझता था कि उसका ज्ञान-क्षेत्र परिमित है, लेकिन इस घटना ने मेरी कल्पनाओं को बिल्कुल निर्मूल बना दिया।"

वस्तु-स्थिति कुछ भी रही हो। इस प्रश्न का—कि पुलिस को सारी स्पष्ट बातें क्यों कर ज्ञात हुईं—स्टालिन अपने दिमाग़ से नहीं निकाल सकता था। उसके मन में रह २ कर प्रश्न उठता था कि पुलिस ने कैसे जाना कि पहले विभिन्न नामों से गिरफ्तार होकर दण्ड पाने वाला वह एक ही व्यक्ति था। जब इस भेद को वह पहले न पा सकी तो उसने इस भेद को बाद में कैसे पा लिया ? उसे इस बात का बड़ा ही आश्चर्य था।

चार वर्ष के बन्दी जीवन में उसने अपने साथ काम करने वाले मित्रों और सहयोगियों पर सहस्रों बार दृष्टि-पात किया। सहस्रों बार वह अपने आप प्रश्न करता था कि ऐसा कौनसा मित्र है जिसने मेरे रहस्य का भेद खोला ? आखिर किसको मेरे जीवन का इतनी बातें ज्ञात हो सकती हैं ? उसका खयाल उस समय की ओर जाता जब पुलिस ने आकर उसे गिरफ्तार किया था। उसका मित्र मालीनास्की उसके बराबर में खड़ा था। मालीनास्की ने उस अवसर पर उसकी निर्दोषता पर बहुत बल दिया था, किन्तु सिपाहियों ने उसकी कोई बात न सुन कर उसे कठोरतापूर्वक एक ओर को कर दिया……।

इन चार वर्षों में मालीनास्की ने पार्टी में असाधारण प्रभुत्व प्राप्त कर लिया था। लेनिन ने उसकी योग्यता के सम्बन्ध में जो भविष्य-वाणी की थी, वह सोलहों आने सत्य निकली थी। मालीनोस्की प्रबन्धक समिति का सदस्य भी बन गया था। युद्ध-

काल में लेनिन विदेशों में रहता था और स्टालिन उत्तरी ध्रुव के निकट निर्वासित-जीवन व्यतीत कर रहा था। अतः युद्ध के दिनों में मालीनोस्को पार्टी के सारे काम सुन्दर ढंग से चलाता रहा।

अब की बार क्रान्तिकारी श्रेणि विजयी हुई और रूस स्वतंत्र हो गया। कैरनस्की ने शासन की बागडोर अपने हाथों में ले ली। लेनिन बाहर बैठा रूस वापस आने के लिये महान् प्रयत्न कर रहा था। शासन-सत्ता अस्थायी तौर पर कैरनस्को के हाथ में थी। किन्तु यह स्पष्ट था कि लेनिन की कार्यशील और क्रान्तिकारी पार्टी निकट भविष्य में ही महत्वपूर्ण स्थिति प्राप्त करेगी। राज-नीति विज्ञान का गहरा अध्ययन करने वाला प्रत्येक व्यक्ति बड़ी सरलता से कह सकता था कि यदि लेनिन की पार्टी का प्रभुत्व हुआ तो भावी रूस के राष्ट्र-निर्माण में जो व्यक्ति प्रमुख भाग लेंगे वह इस पार्टी के प्रतिष्ठित मेम्बर लेनिन, स्टालिन और ट्रॉट्स्की ही होंगे। एक चौथा नाम मालीनास्की का भी उनके साथ लिया जाता था—वही व्यक्ति जिसके विषय में लेनिन ने बड़ी आशा भरी भविष्यवाणी की थी। लेकिन······

क्रान्ति की समाप्ति पर रूस की खुफिया पुलिस के सभी कागज-पत्र क्रान्तिकारी श्रेणि के हस्तगत हुए। जब उन पत्रों को देखा गया तो बड़ी आश्चर्यजनक बात मालूम हुई। एक ऐसी मिसल निकली, जिस पर मालीनोस्को का नाम निम्न प्रकार अङ्कित था।

"रोमान मालीनोस्की नं० १३२४ जो सन् १९१० से रूस की खुफिया पुलिस में काम करता है। "इस फाइल से ज्ञात हुआ कि आरम्भ में उसको गुप्तचर विभाग की ओर से दस रुबेल मासिक वेतन मिलता था। किन्तु उसकी योग्यता और विश्वा-

सनायता के कारण शीघ्र ही उसे काफी वेतन मिलने लगा। १९१७ के जनवरी मास में वह एक सौ रूबेल मासिक वेतन पाने लगा। इस मिसल में एक स्थान पर ओकराना पुलिस के उच्चाधिकारी वैलटसकी ने खुफिया एजेंट नं० १३२४ के सम्बन्ध में निम्न पंक्तियां अपने हाथ से लिखी थीं—

मालीनास्की रूस की साशल डमाक्रेटिक पार्टी के बोल्शेविक दल का एक बड़ा उपयोगी और साहसी कार्यकर्त्ता है। मालीनास्की इस दल की प्रेग-कॉंग्रेस में बाल्शेविकों की ओर से प्रतिनिधि चुना गया था। उसके साथ कॉंग्रेस के जो अन्य मेम्बर गए, उनमें से निम्न क्रान्तिकारियों को उसके इशारे पर गिरफ्तार किया गया था अर्थात् मल्याटेन नोगवान, साडे लाक और शाजाको (स्टालिन) इसके आगे लिखा था "मालीनास्की डूमा का मेम्बर निर्वाचित हुआ।" और अन्त में—

"हमें इस बात का विशेष प्रयत्न करना चाहिये कि मालीनोस्की भी इस दल का नेता बने।"

बस सारा रहस्य खुल गया। जार के शासन की राजनैतिक स्थिति इसी एक घटना से पश्चिमीय योरुप के सामने प्रगट होगई, जो अभी तक वास्तविक स्थिति से पूरी तरह परिचित न थे। रूस की ओकराना-खुफिया पुलिस ने कई अन्य भी आश्चर्य-पूर्ण रहस्यों का उद्घाटन किया। इस पुलिस का एक कर्मचारी एजाया था, जो एक बड़ा उत्साही क्रान्तिकारी समझा जाता था। वह उत्तेजक वक्तृताएं देता और खून खराबी की योजनाएं खुफिया-पुलिस के अध्यक्ष को भी भेज दिया करता था। माली नोस्की भी ऐसा ही व्यक्ति प्रमाणित हुआ। वह खुफिया पुलिस की इच्छा से लेनिन की पार्टी में सम्मिलित हुआ। उसने अल्प समय में ही आश्चर्यजनक प्रसिद्धि प्राप्त कर ली। उसकी

व्यक्तित्व साहस और वीरता-पूर्ण था। वह सभी कार्य्यों को इतने सुन्दर ढंग से करता कि किसी को लेशमात्र भी अविश्वास नहीं हो सकता था। वह दोनों प्रकार का अभिनय आश्चर्यपूर्ण योग्यता के साथ करता था। वह पार्लमेंट का सदस्य बनने के पश्चात् जब डूमा में अपनी वक्तृता की धूम मचा देता तो उससे पहले उसका मसविदा खुफ़िया पुलिस के अध्यक्ष को दिखा लेता था इसके अतिरिक्त पुलिस के अध्यक्ष का यह वाक्य कि "माली नोस्की को इस पार्टी का अध्यक्ष बनाया जावे" केवल किसी आयोजना का अँश न था। वह वास्तव में शीघ्र ही इस पार्टी का नेता बन जाता। चूँकि उस का स्थान लेनिन से दूसरे नम्बर पर था, अतः वह निर्दिष्ट स्थान के बहुत ही निकट पहुँच चुका था।

यहाँ यह प्रश्न पैदा होता है कि यदि एक आकस्मिक घटना ने मालीनोस्की की मिसल क्रांतिकारियों के हाथों तक न पहुँचा दी होती तो स्थिति क्या से क्या होजाती? वास्तव में मालीनोस्की की भी भूल थी। यदि वह तनिक दूरदर्शिता से काम लेता तो अवश्य इस बात का प्रबन्ध कर लेता कि उसकी निजी मिसल खुफ़िया पुलिस के कागजों में सम्मिलित करके न रक्खी जाती। यदि ऐसा होता तो उसका नाम लेनिन के सेनापतियों में निरन्तर लिया जाता और रूसी क्रान्ति के इतिहास लेखक यह लिखने के स्थान पर कि इस क्रान्ति में तीन व्यक्तियों का मुख्य भाग था अर्थात् लेनिन, ट्रॉटस्की और स्टालिन का—जिन्होंने जार के शासन को पलटकर उसके असीम राज्य को अपने आधीन किया—एक चौथा नाम मालीनोस्की का सम्मिलित करते और वह नाम इतिहासों में निरन्तर चलता रहता।

इस छोटी सी आकस्मिक घटना ने स्थिति को बिल्कुल ही बदल दिया। इतिहास-पुस्तकों में उल्लेखनीय स्थान प्राप्त

करने की बजाय उसका चित्र संसार के सब से बड़े देश-द्रोहियों के चित्रालय में लगाया गया। मालीनोस्की का रहस्य उद्घाटन क्रान्ति के उस काल में हुआ था जब किसी भी आदमी के लिये देश से बच कर निकल जाना संभव न था।

अब स्टालिन को ज्ञात हुआ कि मालीनोस्की ने ही उसका भेद प्रगट किया था और निसंन्देह वही उसके विगट जीवन से पूरी तरह परिचित था। दोनों इकट्ठे रहा करते थे। स्टालिन को स्वप्नमें भी यह विचार नहीं हो सकता था कि उसका एक घनिष्ठतम मित्र उसके ही वक्षस्थल पर वार करने को तयार हो जावेगा। वस्तु स्थिति का यथार्थ ज्ञान होने पर क्रान्तिकारियों की एक छोटी टुकड़ी स्टालिन के नेतृत्व में मालीनोस्की की खोज करने लगी। यद्यपि उन लोगों ने सब कुछ छान मारा, परन्तु मालीनोस्की का कहीं पता न चला।

ईश्वर ही जाने कि उसका क्या हुआ। सम्भव है किसी ऐसे व्यक्ति ने जिसको सजा दिलाने में उसका हाथ रहा हो उसको भगाते हुए देखकर मार डाला हो। उसके सम्बन्ध में एक अन्य कल्पना भी की जा सकती है। सम्भव है वह वेश बदल कर रूसी सीमा से निकल जाने में सफल हो गया हो और अब तक पेरिस या लन्दन में किसी एकान्त स्थान में शान्त जीवन व्यतीत कर रहा हो।

७

अक्टूबर की क्रान्ति

आखरि मार्च १६१७ में रूस की राष्ट्रीय क्रान्ति का श्रीगणेश हुआ। आश्चर्य की बात तो यह है कि राजकीय वेश का प्रसिद्ध ग्रैंड ड्यूक भी राष्ट्रीय जाग्रति का समर्थक बनकर इस आन्दोलन में सम्मिलित हो गया। मध्य श्रेणि की जनता ने नई स्थिति का इस लिये स्वागत किया कि उसका विचार था कि इस प्रकार यह स्वच्छन्द शासन पाश्चात्य प्रजातंत्र की स्वाधीनता प्राप्त कर लेगा। किन्तु पत्थर जब एक बार लुढ़कना आरम्भ हो जाता है और रास्ता ढलवां हो तो कोई नहीं कह सकता कि कहां जाकर ठहरेगा और ठहरने से पहले किस २ को कुचल डालेगा। साधारण निर्धन जनता के साथ साथ २ मार्च को ग्रैण्ड ड्यूक ब्लाडी मैरोविच ने भी अपने नौकरों द्वारा अपने भव्य भवन पर लाल पताका फहरा दी।

उसी अवस्मरणीय तिथि को निकोलास द्वितीय—दोनों रूस के सर्वसत्ताधारी जार ने, जो भविष्य की घटनाओं का बिल्कुल ज्ञान न रखता था—मुस्कराते हुए अपने बेटे को राजगद्दी सौंप दी। ऐसा प्रतीत होता है कि वह पूर्व के अपने शब्दों को बिलकुल ही भूल गया। उसने बड़ी दृढ़ता-पूर्वक यह शब्द कहे थे।

"यदि मुझे रूस की आधी जन-संख्या को भी फांसी पर

लटका देना पड़े तो उसकी चिन्ता न करूंगा। किन्तु किसी भी स्थिति में मैं अपने अधिकार को न छोड़ूंगा।"

ज़ार के गद्दी से हटते ही नया मंत्रि-मंडल बना। इस मंत्री-मंडल में राजकुमार लूव प्रधान मंत्री बना और मध्य श्रेणि तथा उच्च श्रेणि के व्यक्तियों को उसमें सम्मलित किया गया। किन्तु आंधी की प्रबलता तब भी किसी प्रकार कम नहीं हुई। राजनीतिक वातावरण उसी प्रकार अशान्त था। क्रान्ति की ज्वाला देश के कोने २ में भयङ्कर रूप धारण करती जा रही थी। शीघ्र ही एक नवयुवक क्रान्तिकारी वकील जिसका नाम कैरनस्की था—नए शासन का पथ-प्रदर्शक बना। उसने अपनी अपूर्व प्रभाव-पूर्ण वक्तृता में यह प्रसिद्ध शब्द कहे, "मैं रूस को सारे योरुप के देशों से अधिक स्वतंत्र बना कर दिखाऊंगा।" कहना न होगा कि अभी तक लेनिन और उसके साथी रूस से बाहर ही थे।

लेनिन १६०५ की असफल क्रान्ति के बाद स्वीजरलैंड भाग गया था। वहां रह कर वह एक पत्र का सम्पादन करता, अपने शिष्यों को आदेश करता और उस भारी आन्दोलन को चलाता रहा, जिसे आगे चल कर संसार के एक विस्तृत देश में भयङ्कर क्रांति मचानी थी। वह अपने साथियों सहित स्वीजरलैंड के तटस्थ प्रदेश में रहते हुए बड़ी उत्सुकता-पूर्वक रूस की नवीन खबरों की ताक में लगा रहता था। जब उसे पता लगा कि ज़ार ने शासन-कार्य छोड़ दिया है, तो उसने सोचा कि अब कार्य-क्षेत्र में आने का अच्छा समय आ गया है। किन्तु कठिनाई यह थी कि रूस की चारों ओर से नाकाबन्दी हो रही थी। अब लेनिन और उसके साथी प्रविष्ट हों तो किस तरह? पश्चिम की ओर जर्मनी, आस्ट्रिया, हंगैरी, टर्की और

बल्गेरिया को सुसज्जित सेनाएं तैनात थीं। यदि लेनिन और उसके साथी उस रास्ते से आना चाहते तो उनके लिए आवश्यक था कि वह जर्मनो के जर्नलों अफसरों से प्रवेशाज्ञा प्राप्त करें। अब रह गया रूस में आने का दूसरा मार्ग। उस पर ब्रिटेन और फ्रांस की सेनाएं कब्ज़ा किये बैठी थीं।

इन दिनों लेनिन और उसके साथियों के जीवन का प्रत्येक क्षण चिन्ता और उद्विग्नता में गुजरता था। वह जानते थे कि यदि हम ठीक समय पर देश के अंदर न पहुँचे और मध्यम श्रेणि की क्रांति—जो आरम्भ हो चुकी है—शक्तिष्ट हो गई तो फिर उनकी सोची हुई क्रांति-आयोजना अनिश्चित समय के लिये स्थगित हो जावेगी। इस दशा में उनके लिये यथा-शीघ्र रूस पहुँचना आवश्यक था। परन्तु कठिनाई भी तो यही थी कि वह वहां कैसे और किस मार्ग से पहुँचे। लेनिन के साथियों ने सर्वप्रथम इस बात का पता लगाना आरम्भ किया कि क्या ब्रिटेन और फ्रांस उनको गुजरने की अनुमति देंगे? किन्तु उनको पता लगा कि उधर से कुछ भी आशा नहीं की जा सकती। वास्तविकता यह है कि ब्रिटेन और फ्रांस कैरनस्की की सरकार के साथ अपने सम्बंधों से पूर्णतः संतुष्ट थे। उनको विश्वास दिलाया गया था कि क्रांति की सूरत में भी रूस अपनी सहायता की प्रतिज्ञा को पूर्ण करता रहेगा। अर्थात् वह मित्र-राष्ट्रों के साथ २ माध्यमिक श्रेणियों के विरुद्ध संघर्ष जारी रखने को तय्यार था। अतः मित्र-राष्ट्रों की इच्छा यह थी कि लेनिन की पार्टी के आदमी स्वीजरलैंड से बाहिर न आने पावें। वहीं बैठे अपना समय गुजारते रहें। यदि वह किसी प्रकार रूस जा पहुँचें तो कैरनिस्की के वर्तमान शासन की सत्ता को छिन्न-भिन्न करना उनके लिये कठिन न होगा। अतः इस ओर से

निराशा होकर लेनिन के आदमियों ने दूसरी पार्टी से पूछ-ताछ आरम्भ की। उन्होंने जर्मनी से पूछा कि क्या वह लोग उनको और उनके नेता लेनिन को रूस में प्रविष्ट होने की अनुमति देंगे? आशा के प्रतिकूल भी जर्मनों ने सहायता देना स्वीकार कर लिया।

आरम्भ में जर्मनों का अनुमान था कि मध्य श्रेणि की क्रांति वाला रूस इस महायुद्ध से अवश्य ही प्रथक् हो जावेगा और जब रूस युद्ध में भाग लेना छोड़ देगा तो जर्मनी और आस्ट्रिया की महान् सेनाएं जो रूसी सीमा को लोहे कि दीवार की भांति घेरे खड़ी थीं, उधर से स्वतंत्र होकर पश्चिमी युद्ध क्षेत्र को भेजी जा सकेंगी और वहां उनसे अंग्रेजों और फ्रांसीसियों के विरुद्ध काम लिया जा सकेगा। लेकिन अब उन्होंने देखा कि कैरनस्की जर्मनों के विरुद्ध युद्ध जारी रखने के लिये प्रत्येक सम्भव साधन जुटा रहा है।

इस दशा में उन्हें यह उत्तम जान पड़ा कि कैर्नस्की की अर्ध-क्रान्तिकारी, अर्द्धसामन्त-प्रधान हकूमत के स्थान पर अधिक क्रान्तिकारी दल को शक्तिशाली बनने में सहायता दी जावे। इस तरह की प्रबल क्रान्तिकारिणी सरकार शीघ्र युद्ध बन्द करके केन्द्रीय शक्तियों के साथ प्रथक् सन्धि कर लेगी। इस अभिप्राय के लिये लेनिन की श्रेणि ही सब प्रकार से उपयुक्त थी। जर्मनों को विश्वास था कि लेनिन के सत्ताधारी होने पर रूस और जर्मनी के झगड़े की समाप्ति हो जावेगी। उधर लेनिन ने विचार किया कि "यदि मैं जर्मनों की सहायता से रूस में प्रविष्ट हुआ तो मेरी श्रेणि पर जर्मनी का ऐसा भारी ऋण होगा जिस से मुक्त होना कठिन हो जावेगा। इसके अतिरिक्त सदा के लिये मेरे माथे पर कालिमा का टीका लग रहेगा कि जर्मनों का समर्थन प्राप्त करके कैर्नस्की से अधिकार छीने। इसके पश्चात् यदि

मैंने युद्ध बन्द किया तो कोई यह न कहेगा कि चार वर्ष से निरन्तर चलते हुए क़त्ले-आम को बन्द करने के लिये ऐसा किया है, अपितु यह समझा जावेगा कि जर्मनों के वास्ते मैंने ऐसा किया है। अतः यदि जर्मनों ने मुझे गुजरने का मौक़ा दे दिया तो मेरे लिये लोगों की उस आवाज़ को दबाना कठिन हो जावेगा कि मैं जर्मनों के उद्देश ही रूसी प्रजा के समक्ष रखने को रूस आया हूँ। यदि मैं एक बार यह काम कर बैठा तो मेरे लिये प्रजा द्वारा किये जाने वाले आक्षेपों का समाधान करना कठिन हो जावेगा और भविष्य में जो कुछ भी मैं करूंगा, उसमें मेरी सद्-भावनाओं को भी उचित रूप में न देखा जावेगा।" लेकिन इसके बाद फिर वही प्रश्न उठता था कि आखिर रूस के अन्दर पहुंचने का क्या उपाय हो सकता है।

यह वह समय था जब संसार के इतिहास में एक विचित्र सम्मेलन का अधिवेशन प्रारम्भ हुआ। वाम पक्ष की प्रबल क्रान्तिकारी श्रेणि—जिसका प्रचार-कार्य एक साधारण से अप्रसिद्ध रूसी पत्र पर निर्भर था—के प्रतिनिधि जर्मनी के शाही ख़ान्दान होहेनजोलर्न के प्रतिनिधियों के साथ मिलकर विचार-विनिमय करने के लिये बैठे इस विचार-विनिमय का उद्देश्य था कि लेनिन और उसके साथी किस मार्ग से सफ़र करके रूस में प्रविष्ट हों। यद्यपि इस अयोजना का प्रगट उद्देश यही था तथापि इस बात को प्रत्येक व्यक्ति जानता था कि यह लोग गुप्त रूप से रूस के भविष्य के सम्बंध में वार्तालाप कर रहे हैं।

इस सम्बन्ध में सब से प्रथम वार्तालाप जिन व्यक्तियों में हुआ उनमें एक तो स्वीज़रलैंड का जर्मन राजदूत रोमबर्ग और दूसरा लेनिन के-दल के सम्पादन-विभाग का एक कर्मचारी कार्ल रेडिक था। रोमबर्ग ने इस वार्तालाप के प्रारम्भ की सूचना शीघ्र

ही जर्मनी के उच्च सेनाधिकारी सोडन डार्फ को दी और उसने लेनिन द्वारा प्रस्तुत शर्तों को साधारण संशोधन के पश्चात् स्वीकार कर लिया। वह शर्तें निम्न प्रकार थी:—

१. जिन रेलगाड़ियों में लेनिन और उसके कर्मचारी यात्रा करें, उनको जर्मनी के प्रदेश में विशेष अधिकार प्राप्त होंगे।
२. जर्मन शासकों एवं अधिकारियों को उन गाड़ियों में प्रवेश करने का अधिकार न होगा।
३. जर्मन अधिकारी उन गाड़ियों के यात्रियों से न राहदारी पत्र (पासपोर्ट) की माँगें करेंगे और नाहीं उनके सामान का निरीक्षण करेंगे।
४. जर्मन अधिकारी यही समझेंगे कि यह मुहर बन्द गाड़ियाँ हैं और इनको इसी रूप में जर्मन-भूमि से गुजरने दिया जावेगा।

वह स्पेशल ट्रेन जिसके द्वारा यह ऐतिहासिक यात्रा होनी थी। जर्मनी और स्वीजरलैंड की मध्यसीमा के निकट शाफ़होसन स्थान पर तयार हुई, इस ऐतिहासिक यात्रा की शर्तें उपरोक्त ही थीं। इस गाड़ी का नाम तब से 'लेनिन की मुहरबन्द गाड़ी' ही प्रसिद्ध रहा है। उसमें कुल ३२ यात्री सवार थे। इसे असाधारण गति से जर्मन-भूमि से गुजारा गया। इस अवसर पर सोडन डार्फ ने जो शब्द कहे थे, वह जर्मनी के सेनाधिकारियों की साधारण नीति पर प्रकाश डालते हैं। वह शब्द यह थे—

"आज हमारे जीवित गोला बारूद का क्या होगा ?"

पाठक समझ गये होंगे, इसका निर्देश किस ओर था। सारांश वह मोहर बन्द गाड़ी जीवित गोला बारूद सहित बिना किसी घटना के जर्मन-सीमा पर जा पहुँची। सासनजकी बन्दर में पहुँचकर यह लोग स्वेडेन के एक जहाज पर सवार हुए और

वह उन्हें स्वीडन ले गया। इससे आगे रूस पहुँचना बहुत मुश्किल न था। फिनलैंड उस समय में रूसी-प्रदेश था और वह पुराने गुप्त मार्ग जिनसे होकर क्रान्तिकारी श्रेणि के लोग प्रायः रूस आते जाते थे, उसी समय से उनको ज्ञात थे जब रूस में जार का शासन था।

अब प्रश्न यह था कि मुख्य स्थान में पहुँचने पर उन लोगों के साथ कैसा बर्ताव किया जावेगा? स्वयं लेनिन भी यह न जानता था कि कैरनस्की उनके साथ किस तरह पेश आवेगा। बहुत संभव था कि उनके स्वागत में वह रेल के स्टेशनों को बन्दनवारों से सुसज्जित करा दे। हां, यह भी संभव था कि वह स्टेशन के द्वार पर मशीनगनें लगवा दे, जिससे उन लोगों को उतरते ही गिरफ्तार करके साइबेरिया भेज दिया जावे।

किन्तु पहली बात ठीक उतरी। जिस समय लेनिन सेंट पीटर्स बर्ग के स्टेशन पर आकर उतरा, उसने देखा कि इमारतें खूब सजाई हुई हैं और अगणित दर्शक खड़े हैं। उन सबके आगे श्रेणि-नायक स्टालिन अपने राज-नैतिक गुरु लेनिन का स्वागत करने को उपस्थित था। अगले दिन जब परावडा पत्र प्रकाशित हुआ तो उसका अग्रलेख लेनिन की क़लम से लिखा गया था। अन्य बातों के साथ उसमें यह शब्द अंकित थे—

"कैरनस्की युद्ध जारी रख कर रूसी मजदूरों और कृषकों को मृत्यु-मुख में भेजना चाहता है।......हमारी इच्छा है कि देश के भीतर एक भारी परिवर्तन हो। ऐसा परिवर्तन, जो हमारी इच्छा के अनुकूल हो। वास्तव में सीमान्त के लोग हमारे शत्रु नहीं हैं। हमारे शत्रु देश के भीतर ही मौजूद हैं। हमें यदि युद्ध जारी रखना है तो वह इन्हीं शत्रुओं के विरुद्ध होना चाहिये, जो देश के अंदर मौजूद हैं।" अब मध्य श्रेणि और इन लोगों में

युद्ध आरम्भ होगया। कैरनस्की के झंडे के नीचे असंख्य सेना थी। किन्तु युद्ध करने का साहस किसी में भी शेष नहीं रह गया था। उनमें से भी लगभग दस लाख व्यक्ति बोल्शेविक प्रचार के प्रभाव से सरकार का साथ छोड़ बैठे थे। राजधानी में भी आन्दोलन जारी था। क्रान्तिकारी लोग लारियों में बैठे नगर के बाज़ारों में घूमते थे। उनकी लाल झंडियां हवा में फहराती हुई इन शब्दों को प्रकट करती थी "प्रथम गोली कैरनस्की के वक्षस्थल में!"

कैरनस्की ने देखा कि शासन-नैय्या विपत्ति-भंवर में पड़ गई है। उसने उसे मंझधार से निकालने का अन्तिम यत्न किया। और वह इस प्रकार कि उसने लेनिन और उसके साथियों पर आक्षेप किया कि "यह लोग नया आन्दोलन केवल इस लिये चलाना चाहते हैं कि देश का सीमा-द्वार जर्मनी के लिये खोल दिया जावे।" इस अपवाद से लेनिन चिन्ता में पड़ गया। अब उसके लिये केवल दो ही मार्ग थे। या तो न्यायालय में उपस्थित होकर इस अभियोग का खंडन करे और जिस प्रकार भी संभव हो अपनी सफ़ाई पर जोर दे अथवा देश से भाग जावे। अब तीनों व्यक्ति लेनिन, स्टालिन और ट्रॉट्स्की जो इस समय अमरीका से आ चुके थे—परस्पर सलाह करने बैठे। वह इस परिणाम पर पहुंचे कि देश से भाग जाने में ही कुशलता है। उन्होंने सोचा कि अभी उनका समय दूर है। कैरनस्की की शक्ति अधिक है और उनको कुछ समय और प्रतीक्षा करनी चाहिये। यह निश्चय होते ही लेनिन ने फिनलैंड में शरण ली। किन्तु ट्रॉट्स्की और लोनाचरस्की कैरनस्की के हाथ पड़ गये और क़ैद कर लिये गये। अब केवल स्टालिन ही बचा, जो स्वतंत्रता-पूर्वक सेंट पीटर्स बर्ग के अन्दर आनन्द से अपना कार्य कर रहा था। क्रान्ति के उन स्वर्णमय ऐतिहासिक दिनों में स्टालिन ने फिर एक

बार अपनी भयंकरता और शत्रु-दमन शक्ति का असाधारण परिचय दिया। वह स्टालिन-जिसे रूसी पुलिस ६ बार क़ैद कर चुकी थी-अब भी उतना ही विकट और साहसी बन गया, जितना कि वह आन्दोलन के प्रारम्भ में था। जान पड़ता है कि कैरनस्की को अभी तक यह ज्ञात न हो पाया था कि मैं बारूद से भरे हुए पीपे पर बैठा हूँ और जलती हुई दियासलाई स्टालिन के हाथ में है। जो सैनिक-नाविक बाल्टिक के बन्दरों में थे, वह पहले ही बोल्शेविक दल के पक्ष एवं सहायता की प्रतिज्ञा कर चुके थे। अतः सेंटपीटर्स बर्ग की सेनाओं के क्रान्तिकारी आन्दोलन के कारण विद्रोही हो जाने पर अब कैरनस्की ने नई सेना को युद्धक्षेत्र में भेजने का विचार किया तो उसे मानने के लिये कोई भी तयार न हुआ। उधर जो सेनाएं युद्ध-क्षेत्र से वापिस राजधानी को आ रही थीं, उन्हें स्टालिन के आदमियों ने मिल कर ऐसी पट्टी पढ़ाई कि वह सेंट पीटर्स बर्ग लौटने के स्थान पर अपने २ घरों को चली गईं। उन्होंने इतने से ही बस नहीं किया, वरन गांवों में पहुंचने पर लोगों में यह विचार फैलाना आरम्भ किया कि शताब्दियों की दबी हुई प्रजा के लिये अपने अधिकार प्राप्त करने का समय आ गया है। किसानों को चाहिये कि उस भूमि पर—जो अभीतक जमींदारों के कब्ज़े में थी-अपना कब्ज़ा जमा लें और किसी को पास न फटकने दें।

१० अक्तूबर को सभी तयारियां पूरी हो गईं। अब लेनिन के वापिस आने का समय आ पहुंचा। लेनिन वेष बदल कर राजधानी में दाख़िल हुआ। उसने काले रंग का चश्मा लगाया हुआ था और गले में मजदूरों के वस्त्र पहने हुए थे। इस बदले हुए वेष में उसे बहुत कम लोग पहचान सके। उसने आते ही एक कमैटी बनाई, जिसने दो सप्ताह में ही देश के अन्दर बोल्शेविक पार्टी के झंडे गाड़ दिये और देश का

सोवियट रूस नाम रक्खा । इस कमैटी के सदस्य लेनिन, ट्रॉट्स्की, स्टालिन, बोबोनोफ, कामानेफ और जीनोवीफ थे। इन्हीं ६ व्यक्तियों ने अक्तूबर की क्रान्ति को सफल बनाया।

२५ अक्तूर को गृह-युद्ध का आरम्भ हुआ और ७ नवम्बर को कैरनस्की के शासन का अन्त हो गया। इस पर भी गृह-युद्ध की अग्नि लम्बे समय तक देश के कोने २ में सुलगती रही। सब प्रकार से निराश होने पर कैरनस्की ने सन्धि के लिये प्रार्थना की, परन्तु लेनिन का उत्तर संक्षिप्त और निर्णयात्मक था। उसने स्पष्ट कह दिया था कि सन्धि तभी हो सकती है कि दूसरा दल बिना शर्त आधीनता स्वीकार करे और कैरनस्की के साथ हम जैसा भी चाहें सलूक करें। जब कैरनस्की ने देखा कि शासन-नैय्या मंझधार में डूबा चाहती है, तो उसने अपनी सुरक्षता का विचार किया और शासन की चिन्ता छोड़ कर भाग निकला।

रेल के प्लेटफार्म पर लट्ठ शरीर का एक बौना सा व्यक्ति—जिसके शिर के बाल उड़े हुए और आंखें प्रकाशमान थीं—विचित्र अवस्था में खड़ा हुआ था। उसको कईसप्ताह से वस्त्र बद-लने तक का अवसर न मिल पाया था। अतः उसके वस्त्रों पर सैकड़ों सिकुड़न और दाग़ धब्बे लगे हुए थे। यह व्यक्ति नवीन क्रांति का पथ-पदर्शक लेनिन था। कैरनस्की के भागने की खबर पाते ही उसने जोर से मेज़ पर हाथ दे मारा और कहा "मेरे सच्चे मित्रो! क्रांति की विजय हो गई। पुराने शासन का अन्त हो चुका। अब रूस के इतिहास में एक नये अध्याय का आरम्भ होता है।" इस स्मरणीय अवसर पर दो व्यक्ति और भी उसके बराबर खड़े हुए थे। वह थे स्टालिन और ट्रॉट्स्की। तीनों मित्रों ने रूस की प्राचीन पद्धति के अनुसार हर्ष प्रगट करते हुए परस्पर गले मिल कर एक दूसरे का मुख चूमा।

८

स्टालिन और ट्रॉट्स्की का संघर्ष

किन्तु रूसी क्रांति के यह तीनों नेता मित्र होते हुए भी अब परस्पर लड़ने झगड़ने लगे। प्रथम नम्बर लेनिन का था। वह पूर्व का रहने वाला, पश्चिम में आकर पढ़ा और वहीं उसने शिक्षा प्राप्त की थी। प्रकृति ने उसे एक सुन्दर मस्तिष्क और दृढ़ इच्छा-शक्ति दी थी। अपनी मृत्यु के अन्तिम दिन तक वह रूसी-क्रांति का प्रबल समर्थक रहा। वह अपने जीवन में ही जनता के लिये अवतार बन गया था। रूस की असंख्य प्रजा उसे अवतार की तरह मानती थी। आज भी मास्को के लाल चौक में उसकी प्रस्तर-प्रतिमा मौजूद है। मज़दूर और किसान जब उसके पास से गुज़रते हैं तो उनका मस्तक उसके प्रति सन्मान से झुक जाता है। उनके हृदयों में उसका मान संसार के अस्तित्व तक क़ायम रहेगा।

उसके सहायक ट्रॉट्स्की और स्टालिन में इतना भारी मतभेद था कि उसका ठीक २ अनुमान करना आसान नहीं। ट्रॉट्स्की यहूदी और बड़ा प्रतिभाशाली था। स्टालिन एक किसान का बेटा था। वह साहसी और दृढ़ था। स्टालिन सच्चे अर्थों में एक सरल-प्रकृति का गँवार देहाती था। वह प्रत्येक प्रकार के व्यसन अथवा दोष से रहित था। वह प्राचीन

पद्धतियों का समर्थक, सन्देहशील किन्तु अत्यन्त बलवान था। इन दोनों व्यक्तियों में रूसी क्रांति के प्रारम्भ में ही वैमनस्य आरम्भ हो गया, जिसने शनैः २ प्रबल विरोध का रूप धारण कर लिया।

क्रांति के अद्भुत काल के लेखों को देख कर हँसी भी आती है और रुलाई भी। दोनों व्यक्ति एक ही आन्दोलन के समर्थक और प्राण होते हुए भी परस्पर एक दूसरे को अपने उच्च-अधिकारी लेनिन की दृष्टि में गिराने एवं, एक दूसरे को हानि पहुंचाने के लिये सदा तत्पर रहते थे। किन्तु लेनिन के जीवन काल में यह परस्पर की फूट बीच ही में विलीन हो गई।

लेनिन ने दोनों का मेल करा दिया। दबे हुये आवेश और उत्तेजना के होते हुए भी दोनों ने दांत भींच कर रस्मी हाथ मिला लिये। बोल्शेविक सरकार के राज्य में—सन् १९१७ से,१९२३ में लेनिन की मृत्यु तक—स्टालिन और ट्रॉट्स्की दोनों ही राज्य के उच्चतम पदों पर कार्य्य करते रहे। ट्रॉट्स्की क्रांतिकारी शासन का प्रथम परराष्ट्रमंत्री बना और उसी के द्वारा ब्रेस्ट लिटोवस्क नामक स्थान पर जर्मनी के साथ सन्धि की शर्तें तय की गईं। उस समय स्टालिन अल्प-संख्यक-जातियों का मंत्री था। रूस जैसे विशाल देश में लग भग ३० विभिन्न जातियों के लोग बसते हैं, इसलिये क्रियात्मक रूप में उसका महत्व भी कुछ कम न था।

इसके बाद ट्रॉट्स्की युद्ध मंत्री बना। इस समय स्टालिन युद्ध-समिति का सदस्य था और प्रतिदिन उसका वास्ता ट्रॉट्स्की से पड़ता था। परन्तु इन दोनों की क्षणमात्र के लिये भी नहीं बनती थी। स्टालिन जब कभी अवसर पाता, अपने राजनीतिक

गुरु लेनिन के सामने यह सिद्ध करने का प्रयत्न करता कि ट्रॉट्स्की इस उत्तरदायित्व-पूर्ण पद के लिये सर्वथा अयोग्य है।

सन् १६२३ में लेनिन पर बीमारी का प्रथम बार कठोर आक्रमण हुआ। वह जानता था कि रोग भयानक है। परन्तु वह आश्चर्य-जनक साहस और उपेक्षा के साथ उस दिन को भुलाता रहा, जब उसे विवश होकर उस भव्य भवन से विदा होना पड़ता, जिसे उसने वर्षों के अनवरत परिश्रम से तयार किया था। उसने जिस वीरता से शत्रुओं का मुकाबला किया था, उसी साहस और उत्साह से मृत्यु से भी युद्ध किया। उसने उत्साह-वर्द्धक ढंग पर स्पष्ट कहा था। "यद्यपि मैं मृत्यु से नहीं डरता, तथापि मरने से डरता हूँ।" उसके कथन का आशय यह था कि अभी उसके मरने का समय नहीं आया था और वह समय से पहले इस संसार से विदा हो गया तो उसके उत्तराधिकारी पारस्पारिक वैमनस्य से उसके पैदा किये हुए उन सुन्दर परिणामों को नष्ट कर देंगे, जिन्हें उसने महान् प्रयत्न के पश्चात् क्रांति की बदौलत प्राप्त किया था।

मृत्यु से दो वर्ष पूर्व लेनिन ने अपनी पार्टी की केन्द्रीय कमैटी के नाम एक पत्र लिखवाया, जो एक प्रकार से उसके राजनीतिक वसीयतनामे का स्थान रखती है। यह पत्र इस उद्देश्य से लिखा गया था कि उसकी बनाई हुई संस्था, उसकी मृत्यु के साथ ही समाप्त न हो जावे। इस पत्र ने अब एक ऐतिहासिक हस्तलेख का स्थान प्राप्त कर लिया है। उसमें सर्व प्रथम उल्लेखनीय बात यह है कि लेनिन ने जिन दो व्यक्तियों को अपना उत्तराधिकारी नियत किया, वह यही दो प्रतिद्वन्द्वी स्टालिन और ट्रॉट्स्की थे। इन दोनों की नियुक्ति इस दृष्टि से विशेष महत्व रखती है कि ज़ीनोवीफ़ और कामानीफ़ जैसे कई प्रसिद्ध

और सर्वप्रिय वृद्ध क्रांतिकारियों के होने पर भी लेनिन की दृष्टि उन पर न गई, यद्यपि वह उत्तम ढंग से लेनिन के रिक्त स्थान की पूर्ति कर सकते थे। इस हस्तलेख में कुछ पंक्तियां ऐसी हैं जिनके अध्ययन से यह बात सिद्ध होती है कि राज-नीतिक क्षेत्र में लेनिन कितना दूर-दर्शी था। उसने एक स्थान पर लिखा है, "इन दोनों व्यक्तिया के पारस्पिक संबन्ध दल में भयानक फूट उत्पन्न करने का कारण बन सकते हैं।"

जिस दिन लेनिन की मृत्यु हुई उससे अगले दिन ही उसकी विधवा पत्नी ने लेनिन का छोड़ा हुआ वसीयतनामा केन्द्रीय समिति को दे दिया। स्टालिन इस समय साम्यवादी दल की केन्द्रीय कमैटी का विश्वासनीय सदस्य था। जो लाग रूसी नियमों से भली भांति परिचित नहीं हैं; सम्भव है वह इस पद को महत्व-पूर्ण न समझें, किन्तु वास्तविक स्थिति यह है कि रूस के राजनीतिक नियमों के आधीन जो व्यक्ति इस पद पर नियुक्त होता है वह महत्व-पूर्ण अधिकार रखता है। लेनिन का वसीयतनामा स्टालिन ने ही पढ़ कर सुनाया। पत्र को पढ़ते हुए जब वह उस स्थल पर पहुँचा जहां ट्रॉट्स्की का उल्लेख था। तो उस समय उसने निम्न वाक्य पर असाधारण बल दिया— "यह कोई प्रसंग की बात नहीं है कि हमारी श्रेणि में सम्मिलित होने से पूर्व ट्रॉट्स्को बोल्शेविक नहीं, अपितु मेन-शेविक था।" ट्रॉट्स्को ने जिस समय यह वाक्य सुना तो वह चौंक उठा और बात काटते हुए बोला, "यदि कष्ट न हो तो इस वाक्य को पुनः पढ़ कर सुनाइये।" स्टालिन ने लेनिन-लिखित वह वाक्य फिर एक बार उच्च स्वर से पढ़ा और प्रत्येक शब्द पर पर्याप्त बल दिया।

सभी अवाक् रह गए। कोई शब्द उसे काटने को सुनाई

न दिया। किन्तु तथ्य यह है कि यहीं से इन दोनों व्यक्तियों में पारस्परिक उत्पात का प्रारम्भ हुआ। लेनिन ने अपने वसीयतनामे में लिखा था, "बाल्शेविक रूस के प्रबन्ध-सम्बन्धी कार्य्यों का स्टालिन और ट्रॉट्स्की परस्पर निर्णय करलें।" एक दृष्टि से यह एक उत्तम बात थी। जिनका पारस्परिक मतभेद इतना अधिक हो ऐसे दो व्यक्ति परस्पर मिल कर अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य कर सकते हैं। किन्तु क्रियात्मक रूप में यह हुआ कि उनके बुरे स्वभाव और स्वच्छन्दता ने उनके दैनिक जीवन में मिठास के स्थान पर अधिक कटुता उत्पन्न कर दी।

जहां मतभेद हों, झगड़े जरूर होते हैं। लेनिन की यह भविष्यवाणी सही होकर रही। परस्पर टक्कर शुरू हो गई। संघर्ष प्रारम्भ होने से पूर्व दोनों ने अपने पक्ष में मित्रों को समर्थक बनाने के लिये बड़े प्रयत्न किये। लेनिन की मृत्यु के समय ट्रॉटस्की पद की दृष्टि से अधिक सुरक्षित था। वह जनता में अधिक प्रसिद्ध भी था। सर्वसाधारण पर उसका प्रभाव भी अच्छा पड़ता था। उसने गृह-युद्ध के तीन वर्षों में अपनी प्रसिद्ध गाड़ी द्वारा देश के प्रत्येक भाग में भ्रमण किया था। उसने रूस की अस्त व्यस्त लाल सेना को संगठित किया था। देश का प्रत्येक सिपाही उसका समर्थक एवं प्रशंसक था। सेना के सभी युवक चश्मा लगाने वाले इस लाल मार्शल के सर्वस्वत्यागी अनुगामी थे। यदि ट्रॉट्स्की में इस अवसर पर आवश्यक स्फूर्ति, तत्परता और कार्य्यारम्भ-शक्ति होती और साथ ही वह ठीक ढंग पर अपने प्रचार कार्य को जारी रखता तो निसन्देह वह बिना विशेष प्रयत्न के लेनिन का कार्य्य संभाल कर रूस का सर्वाधिकारी नेता बन जाता। परन्तु ट्रॉट्स्की अपने जीवन में शायद पहली बार झिझक और व्यर्थ के सोच विचार में पड़ गया।

ट्रॉट्स्की ने अपने संस्मरण में लिखा है "मुझे पीठ की पीड़ा रहती थी। अतः मैं इन दिनों रोग-शय्या पर पड़े रहने के लिये विवश था। उसने अपनी बीमारी को इतना भयानक बतलाया कि वह टेलीफोन पर वार्तालाप भी न कर सकता था। किन्तु दूसरी ओर स्टालिन ने अपना कार्य्य पूरी शक्ति के साथ जारी रक्खा। उसने बारी २ से केन्द्रीय कमैटी के प्रत्येक सदस्य से मिलकर उन्हें सभी उचित अनुचित बातें सुझा कर अपना समर्थक बना लिया। परिणाम यह हुआ कि जब ट्रॉट्स्की रोग-शय्या से उठा और उसने दल के कार्यकर्ताओं पर दृष्टि डाली तो नई २ सूरतें आंखों के सामने आने लगीं। लेनिन की मृत्यु के पश्चात् इन दोनों शक्तिशाली प्रतिद्वन्द्वियों में पुनः संघर्ष बढ़ गया। ट्रॉट्स्की ने जनता को स्टालिन के विरुद्ध करने का प्रयत्न आरम्भ कर दिया। दूसरी ओर स्टालिन दल की कार्यकारिणी कमैटी का विश्वस्त सदस्य था और इसीलिये उसकी धाक रूस का पथ-प्रदर्शन करने वाले सभी समाचार पत्रों पर थी। ट्रॉट्स्की की शक्ति को नष्ट करने का उसने भी भारी प्रयत्न आरम्भ कर दिया। उसके यह प्रयत्न ठीक उसी प्रकार के थे जैसे कि उसने जार-शासन को मिटाने के लिये किए थे। उसे इस कार्य्य पर असाधारण ध्यान केन्द्रित करना पड़ा, क्योंकि ट्रॉट्स्की के समर्थक बड़ी संख्या में थे। लेनिन के पश्चात् रूसी ओठों पर उसी का नाम पाया जाता था। ट्रॉट्स्की ने जब यह परिस्थिति देखी, तो वह भी बदला लेने के प्रत्येक प्रकार के अत्याचार के लिये तयार हो गया। उसने सभाएं कीं, पत्र प्रकाशित किये और विरोधी-पक्ष का एक दल बनाया, जिसमें लाखों व्यक्ति सम्मिलित हुए।

यद्यपि स्टालिन अपने स्थान पर दृढ़ता-पूर्वक जमा हुआ

था, किंतु उसे अनुभव करना पड़ा कि उसका मुक़ाबला एक ही व्यक्ति अथवा उसकी सम्पत्ति एवं वीरता से नहीं हैं, वरन् उसे ट्रॉट्स्की द्वारा निर्मित व्यवस्था को ही नष्ट करना होगा। दुर्भाग्य वश ट्रॉट्स्की ने इस भेद को नहीं समझा कि उसके असंख्य सहयोगियों में केवल ऐसे ही व्यक्ति नहीं हैं जो उसको स्टालिन के स्थान पर आरूढ़ करना चाहते हैं, अपितु ऐसे व्यक्ति भी हैं जो सोवियट के दुश्मन हैं और महसूस करते हैं कि वह लाल मार्शल की छाया में सोवियट पर खुल्लमखुल्ला आक्रमण कर सकेंगे। इसी भूल तथा असावधानी का यह परिणाम हुआ कि ट्रॉट्स्की के अभ्युदय के दिन पूरे हो चले और एक दिन वह आया कि उसे रूस से निर्वासित होना पड़ा।

कालचक्र की यही गति है कि जिस व्यक्ति ने अपने यौवन काल में रूसी क्रान्ति में पूरा बल लगाया, जिसने जार के शासनकाल में सब से अधिक विपत्तियां झेलीं, अब उसी महान् त्यागी को क्रान्ति-काल में फिर साइबेरिया के भयानक मैदानों की हवा खानी पड़ी।

किंतु वह निर्वासित होकर भी अपने आन्दोलन का संचालन करता रहा। उसके पास मास्को से हजारों पत्र जाते, जिनका उसको उत्तर देना पड़ता। वह समाचार पत्र प्रकाशित करता। चीनी सीमा के पास उस छोटे से गांव में रहता हुआ जहां उसे नजरबन्द किया गया था—वह मास्को और सेंट पीटर्स-बर्ग में होने वाले जल्सों की व्यवस्था तक स्वयं करता था।

वह बार २ इस बात पर बल देता था कि लोग देखें कि उसके क्रियात्मक कार्य्यों और स्टालिन के सिद्धान्तों में कितना भारी अन्तर है। जिस क्रान्ति की विजय रूस में हो चुकी थी उसकी स्थापना तब तक दृढ़ नहीं समझी जा सकती थी जब

तक उसका प्रभाव समचे यूरोप भर में न फैल जाता। इस से पूर्व इसकी विजय एवं सफलता केवल दिखावे कि वस्तुएं थीं। इसलिये रूसी क्रान्ति की सफलता को स्थायी बनाने के लिये संसार के प्रत्येक भाग में वैसी ही क्रान्ति करनी चाहिये। आंतरिक व्यवस्थाओं के विषय में ट्रॉट्स्की का कथन यह था कि स्टालिन की पद्धति उन देशों की साधारण पुनरावृत्ति है जहां सम्राटों का शासन है। कार्य्य-पद्धति वही है, केवल रूप बदला हुआ है। वहां भी और अन्य भी शासक उच्च-आसन पर आसीन है और शासित प्रजा उसके पैरों में पड़ी है।

वैसे तो स्टालिन दल की गुप्त समिति का साधारण पदाधिकारी था, परन्तु उसके अधिकार और शासन-क्षेत्र की दृष्टि से उसका व्यक्तित्व बहुत बड़ा था। वास्तव में स्टालिन एक ऐसा डिक्टेटर है, जो समग्र भूमण्डल की समस्त जनसंख्या के छटवें अंश से बलात् अपनी बात मनवाता है। वहां जनता को सम्मति देने का कोई अधिकार नहीं। जो उससे कहा जावे, वह उसी को मानने के लिये विवश है। किन्तु इसके मुक़ाबले में ट्रॉट्स्की का कहना था कि मेरे राजनीतिक सिद्धान्त विशाल जन-तंत्र पर अवलम्बित हैं।

इस प्रकार के संघर्ष में प्रायः देखा गया है कि जनता की सहानुभूति आक्रमणकारी की अपेक्षा अत्याचार सहन करने वाले के साथ अधिक होती है। अतः इस मामले में भी साधारण जनता की सहानुभूति निर्वासित ट्रॉट्स्की के साथ ही हुई। स्टालिन के लिये यह जानना कठिन नहीं था कि यदि सच्चे अर्थों में स्वतंत्र जनमत लिया गया, तो विजय ट्रॉट्स्की की ही होगी।

दल की प्रबन्धक कमेटी का अधिवेशन फिर हुआ। इस ऐतिहासिक अधिवेशन में स्टालिन ने लेनिन की राजनीतिक

भविष्यवाणी को फिर दोहराया। स्टालिन का कथन था कि क्रान्ति की सफलता तभी सुरक्षित रह सकती है जबकि ट्रॉट्स्की को देश से बाहर भेज दिया जावे। यहां यह विचारणीय है कि ट्रॉट्स्की के बंटे हुए महत्व के कारण किसी के हृदय में भूल से भी यह विचार पैदा न हुआ कि यदि स्टालिन का सिर उड़ा दिया जाता तो यह किस्सा सदा के लिये मिट जाता। दल ने ट्रॉट्स्की के नागरिक अधिकार छीन कर उसे निर्वासन दंड दिया। अब उस बेचारे को विवश होकर टर्की में शरण लेनी पड़ी। उस देश में रहते हुए ट्रॉट्स्की ने निम्न पंक्तियां लिखीं—

"जिस समय यह लेख प्रकाशित होगा, मेरी आयु (सन् १९२९ में) ५० वर्ष की हो जावेगी। मैं अभी स्कूल में पढ़ता था कि पुलिस ने मुझे पहली बार गिरफ्तार किया। इस दृष्टि से देखा जावे तो मेरा स्कूल कारावास ही था। वहां रह कर ही मैंने निर्वासन-दण्ड और नजरबन्दी के पाठ पढ़े। ज़ार के शासन-काल में मैं चार वर्ष क़ैद में रहा। मुझे दो बार निर्वासित किया गया। पहली बार दो वर्ष बाहर रहना पड़ा। दूसरी बार मैं केवल चन्द सप्ताह के बाद बच कर भाग आया। इस प्रकार मेरी आयु के न्यूनाधिक बारह वर्ष व्यर्थ गये।

"१९०५ की क्रान्ति की असफलता से पूर्व मैं दो वर्ष तक निर्वासित रहा और उसके पश्चात् दस वर्ष तक। युद्ध-काल में जर्मनों ने मुझे कारावास का दण्ड दिया, यद्यपि जर्मनी में न होने के कारण मुझे यह दण्ड भुगतना नहीं पड़ा। उसके अगले वर्ष मुझे फ्रांस से निर्वासित किया गया। फ्रेंच पुलिस ने मुझे स्पेन की सीमा पर ले आकर छोड़ दिया, जहां मुझे फिर एक बार जेल की हवा खानी पड़ी।"

"मैं माड्रिड के जेलखाने से भी बच कर निकल भागा।

परन्तु पुलिस ने मेरा पीछा न छोड़ा। अन्त में जब मैं अमरीका में था तो मुझे सूचना मिली कि रूस में क्रान्ति हो गई। मार्च १६१७ में जब मैं रूस को लौट रहा था। मुझे अंग्रेजों ने गिरफ्तार कर के कैनाडा में कैदियों के एक कैम्प में रक्खा।

"मैंने १६०५ तथा १६१७ की क्रान्तियों में भाग लिया और दोनों अवसरों पर मुझे सेंट पीटर्सबर्ग की सोवियट का सभापति पद प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। फिर मैंने अक्तूबर की क्रान्ति में भाग लिया, इस समय मुझे सेंट पीटर्स बर्ग के प्रथम मंत्रीमंडल में लिया गया। जब मैं विदेश-मंत्री बना तो ब्रेस्ट-लिटोवस्क की सन्धि की शर्तें मेरी ही देख रेख में निश्चित हुईं। युद्ध मंत्री के रूप में मैंने पांच वर्ष की अवधि में पहले लाल सेना का निर्माण किया और बाद में लाल बेड़ा तयार किया। सन् १६२० में मैंने रेल्वे का सारा कुप्रबन्ध दूर करके उसे अच्छे रूप में चलाया।

सन् १६२३ में सरकारी प्रकाशन-संस्था ने मेरी सभी कृतियों को १३ जिल्दों में प्रकाशित किया। इनमें वह पांच जिल्दें सम्मिलित न थीं जो मैंने सैनिक सिद्धान्तों पर लिखी थीं। मेरी अन्य पुस्तकों का प्रकाशन रोक दिया गया और मेरे समर्थकों का विरोध प्रारम्भ हो गया। "सन् १६२८ में मुझको सेंट पीटर्स बर्ग की वर्तमान सरकार ने निर्वासित करके चीनी-सीमा के निकट भेज दिया। १६२६ की फर्वरी में मेरे नागरिक अधिकार छीन लिये गए। इस समय मैं निर्वासित रूप में कुस्तुन्तुनिया के निकट रहता हूँ और वहीं से यह पंक्तियाँ लिख रहा हूँ।

मुझको अपने जीवन में तीसरी बार रूस छोड़ना पड़ा है। कितने खेद का विषय है कि जिसके निर्माण में मैंने सब से बढ़ कर भाग लिया। वही देश मुझे अपनी सीमा से बाहर

भेज रहा है।" इन पंक्तियों को पढ़ने से कम से कम एक बात अवश्य प्रगट होती है अर्थात् अंतिम दंड पाने के बाद ट्रॉट्स्की प्रत्येक प्रकार के प्रयत्न छोड़ कर संतुष्ट सा हो गया था। इस कथन से यह प्रगट नहीं होता कि वह उस राजनैतिक आन्दोलन को नये सिरे से आरम्भ करना चाहता था, जो उसने निर्वासन से पूर्व आरम्भ कर रक्खा था।

लेनिन ने अपने समय में मजदूरों की तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय स्थापित की थी। ट्रॉट्स्की ने चौथी स्थापित की। रूस के अन्दर जो उसके समर्थक मौजूद थे, ट्रॉट्स्की उनके साथ भी किसी न किसी प्रकार सम्बन्ध बनाए रखना चाहता था। अब स्टालिन और ट्रॉट्स्की के संघर्ष ने एक नया रूप धारण कर लिया।

रूस की राजनीति में स्टालिन के अतिरिक्त कैरोफ़ नामक एक और व्यक्ति का उल्लेख भी बहुत बार आता रहा है। इस व्यक्ति को स्टालिन का उत्तराधिकारी नियत किया गया था। अनुमान यह था कि स्टालिन की मृत्यु के पश्चात् कैरोफ़ उसके स्थान की पूर्ति करेगा। किन्तु एक दिन अचानक सारे संसार में यह समाचार फैल गया कि कैरोफ़ को क़त्ल कर दिया गया।

यह आम तौर पर प्रसिद्ध था कि एक पीली मुखमुद्रा और लम्बे कद वाले निकोलाजैफ़ नामक युवक ने कैरोफ़ का वध कर दिया। यह व्यक्ति कैरोफ़ का घनिष्ट मित्र था और प्रायः उसके साथ रहता था।

साधारण जनता में यह ख्याल फैला हुआ था कि यह कार्य ट्रॉट्स्की के समर्थकों का है। मास्को की सरकारी रिपोर्टों में ऐसा ही लिखा हुआ था। इस घटना को सामने रख कर स्टालिन ने यह कहना आरम्भ कर दिया—"ट्रॉट्स्की के समर्थकों ने अपनी नीति बदल दी है। अब वह जनता में आवाज

उठाने पर ही बस नहीं करते, अपितु आतंकवाद का भी आश्रय लेने लगे हैं। स्टालिन ने कैरोफ़ के बध के अपराधियों से भयानक रीति से बदला लेना आरम्भ किया। इस सम्बन्ध में सैंकड़ों आदमी पकड़े गये। जिस व्यक्ति पर तनिक भी सन्देह होता उसे ही कैरोफ़ के बध में सम्मिलित होने के अभियोग में क़ैद कर लिया जाता। विरोधी पक्ष के कुछ प्रसिद्ध व्यक्तियों को इस सम्बन्ध में प्राण-दण्ड भी दिया गया। यह क़त्ले-आम इतना बढ़ा कि साधारण जनता में रोष फैल गया। कैरोफ़ के क़ातिल कहे जाने वाले निरन्तर ३ वर्ष तक मृत्यु के मुख में पहुँचाए जाते रहे। फिर भी यह बदला पूरा न हुआ। यहां तक कि मृतकों की सूची देखने से रोंगटे खड़े हो जाते हैं। इस समय स्टालिन के अतिरिक्त लेनिन के समाकालीन कार्यकर्ताओं में केवल दो या तीन व्यक्ति ही जीवित बचे हुये हैं। इस भयानक क़त्ले-आम का संक्षिप्त वर्णन नीचे दिया जाता है।

स्टालिन ने पोस्ट ब्यूरो के कर्मचारियों में से सर्व प्रथम ट्रॉट्स्की को सन् १९२५ में काकेशस में नजरबन्द करवाया। इसके पश्चात् सन् १९२७ में उसको रूस से निकलवा कर टर्की को निर्वासित किया गया। सन् १९२६ में कामानेफ़ (मंत्रियों को परिषद् के भूतपूर्व प्रधान) और जीनोवीफ़ (जिसे सेंट पीटर्सबर्ग में कोमिटर्न का प्रधान-पद प्राप्त हुआ था) को सर्व प्रथम निर्वासित किया गया। इसके पश्चात् अगस्त १९३६ में इन दोनों को मरवा दिया गया। परावदा पत्र के प्रधान सम्पादक और कोमिंटर्न की व्यवस्थापिका कमैटी के सदस्य नजारन को १९३६ ई० में पोस्ट ब्यूरो से प्रथक् किया गया। मार्च १९३८ में उसे और कामानेफ के स्थानापन्न राई कोबोनो को मरवा दिया गया। ट्रेड यूनियन कौंसिल के

प्रधान टोमस्की को सन् १६३० में अवकाश ग्रहण करना पड़ा। जब अगस्त १६३६ में उसकी गिरफ्तारी की आज्ञा हुई तो उसने आत्म-हत्या करली। १६२६ तक ब्यूरो में से केवल स्टालिन और ट्रौट्स्की ही जीवित बचे। शेष सब असमय ही मारे गए।

यही दशा कमीसारों की कौंसिल के उन सदस्यों की हुई जो लेनिन की मृत्यु के समय उसके सदस्य थे। बजीहानोफ नामक व्यक्ति पहले रसद विभाग का अध्यक्ष तथा बाद में माल अफसर था। इस समय वह साइबेरिया के एक दूरस्थ गांव में आश्रय लिये हुए है। ससरन एक समय रूस की वैदेशिक राजनीति में एक विशेष स्थान रखता था और पार्टी के सभी सदस्यों में असाधारण योग्य समझा जाता था। वह सन् १६३० में किसी झगड़े के आधार पर पार्टी से प्रथक हो गया। इसके पश्चात् उसे भ्रम सा हो गया कि पार्टी के आदमी उसके पीछे पड़े हैं। आखिर उसी दशा में वह पागल होगया। अभी दो वर्ष पूर्व उसकी एक पागलखाने में मृत्यु होगई। जी० पी० यू० का सर्वाधिकारी समेन स्कज क्रासन सोवियट की ओर से पेरिस और लन्दन में राजदूत बनकर गया था। उसने दोनों स्थानों पर अच्छी ख्याति प्राप्त कर ली थी। वह तथा शिक्षा मंत्री लोना मर्सकज दोनों ही असमय मारे गये। तामीरात मंत्री एवं आर्थिक परिषद् के अध्यक्ष कज जी शेफ को विष पिलाया गया। शमट नामक व्यक्ति भी इमारत-मन्त्री था, जिसे अब पुलिस की कड़ी निगरानी में रक्खा जाता है। डाक विभाग के मन्त्री समरनोफ को सन् १६२८ में निर्वासित करके साइ बेरिया भेज दिया गया और अगस्त १६३६ में उसका सिर उड़ा दिया गया। अर्थ तथा कला के भूतपूर्व मंत्री स्कूलफी कोफ को, जो किसी समय लन्दन में रूसी राजदूत था सन् १६३६ में गिरफ्तार किया गया। उसके लिये जनवरी १६३७ में प्राण-दण्ड की

योजना तयार की गई।

लेनिन के पूर्व-अनुगामियों में जीनोकेडस को—जो सन १६३५ तक सोवियट जन-तंत्र की प्रबन्ध-समिति का विश्वस्त सदस्य था—दिसम्बर १६३५ में फांसी के तख्ते पर लटका दिया गया। स्थल और सामुद्रिक सेना का मन्त्री फर्नर सन् १६३५ में गम्भीर परिस्थिति में मरा। गमार्नक—जो सुदूर पूर्व की क्रान्ति-कारिणी कमैटी का पहिले प्रधान था और बाद में सेना का मार्शल बना था, यह जान कर कि उस की गिरफ्तारी के वारंट जारी किये गये हैं—आत्म-हत्या कर बैठा।

प्रबन्धक कमैटी का प्रधान कलनैन, सेनापति दोरी सैलोफ एवं जी० पी० यू० के सर्वाधिकारी मजनस कज, जिसका सन् १६३४ तक प्रभुत्व था, सभी मर चुके। भूतपूर्व कृषि-मंत्री ओसन-सकी जेलखाने में पड़ा सड़ रहा है। रूसी सरकारी बैंक का भूतपूर्व प्रधान, जो बाद में उच्च कलाओं का मंत्री बन गया था—१६३७ ई० में प्राण-दण्ड का शिकार बना। 'असोस्टी जा' पत्र के मुख्य सम्पादक और कोमिनटर्न की केन्द्रीय समिति के मंत्री रेडिक को १६३८ ई० में निर्वासित करके साइबेरिया भेजा गया। वह १६३७ ई० से जेलखाने में पड़ा सड़ रहा है। राकोस्की किसी समय पेरिस और लन्दन में राजदूत था। उसे १६२६ में साइबेरिया भेजा गया। मार्च १६३८ से वह कैदखाने में है। ट्रांस्पोर्ट के उपमंत्री सर बजाकोफ़ को फ़र्वरी १६३७ में क़त्ल कर दिया गया। १६३८ में जनरल स्टाफ़ के प्रमुख तोहट सोस्की और भूतपूर्व युद्ध-मंत्री ओवरो बटज़ को प्राण-दण्ड दिया गया। जी० पी० यू० के अध्यक्ष जगोदा का भी सिर उड़ा दिया गया।

यह सूची केवल उन बत्तीस व्यक्तियों के नामों से तय्यार की गई है, जो रूस के बोल्शेविक आन्दोलन के प्रमुख नेता थे

और जिनको लेनिन के समय उत्तरदाय पदों पर नियुक्त किया गया था। यह बात विचारणीय है कि किसी प्रकार सबल सत्ताधारी विधि-वामता के कारण वह पदभ्रष्ट एवं अपमानित किये गए। क्रान्ति के सनातन अटल नियम का इस दशा में भयानक परिणाम हुआ। बोल्शेविक क्रांति के नेताओं ने आरम्भ में दूसरी श्रेणि के नेताओं को मरवाया। बाद में वह अपने अपनों ही के विरुद्ध हो गए। जो व्यक्ति परस्पर संगठित होकर एक साथ कार्य करके अपने बहुमत से दूसरों के लिये दण्ड की आयोजना किया करते थे, वही पारस्परिक रोष के लक्ष्य बनने आरम्भ हो गए। साधारण जनता इस क़त्ले आम को भय के साथ देखती रही। किन्तु वह कर भी क्या सकती थी? सभी लोग इस बात पर आश्चर्य-चकित थे कि जिन लोगों ने क्रान्ति की भारी सेवाएं की थीं, वही इस क्रान्ति में रौंदे जा रहे हैं।

लेनिन की राजनीतिक भविष्यवाणी अक्षरशः सत्य प्रमाणित हुई। उस ने सोलहों आने सत्य कहा था कि "स्टालिन और ट्रॉट्स्की के पारस्परिक सम्बन्ध दल में फूट डलवाने का सरल साधन बन सकते हैं।" इस विषय में यह भविष्यवाणी इतनी सत्य प्रमाणित हुई कि फूट ने क्रियात्मक रूप धारण कर लिया। किन्तु इस भविष्यवाणी में यह उल्लेख न था कि वैमनस्य के पश्चात् घटनाएं कौनसा रूप धारण करेंगी? दोनों प्रतिद्वन्द्वियों में किसकी शक्ति जबर्दस्त निकलेगी? मुक़ाबले में कौन बाज़ी ले जावेगा? आदि आदि। किन्तु साधारण जनता का विचार है कि इस क़त्ले-आम के पश्चात् स्टालिन ने परिस्थिति पर इतना क़ाबू पा लिया कि ट्रॉट्स्की के अनुगामी अपनी विद्यमानता से रूस में स्टालिन के लिये कोई विशेष खतरा उत्पन्न नहीं कर सकते।

९

स्टालिन का पारिवारिक जीवन

रूस का वर्तमान डिक्टेटर स्टालिन मास्को के रूसी राजमहल क्रेमलिन के उस भाग में रहता है, जिस में जार के शासन-काल में क्रेमलिन के नौकर रहा करते थे। पहली मन्जिल पर तीन कमरे बने हैं, जिनकी खिड़कियां पर सफ़ेद पर्दे छुटे रहते हैं। स्टालिन के इस मकान की मुख्य ड्योढ़ी में इस प्रकार का सादा सामान रक्खा हुआ है, जैसा किसी द्वितीय श्रेणि के होटल में पाया जाता है। एक अर्धगोलाकार कमरा भोजन करने के लिये निश्चित है, जिसमें नौकरानी खाद्य-पदार्थ लाकर मेज पर रख देती है। किन्तु वह खाद्य-पदार्थ पास के एक होटल से तयार हो कर आते हैं।

एक गगनचुम्बी महल के अन्दर रहने वाले बेताज के बादशाह का इतना सरल जीवन निस्सन्देह प्रत्येक दर्शक को आश्चर्यचकित कर देता है। पश्चिमी योरुप में कोई साधारण अधिकारी भी ऐसी जीवन-चर्या और ऐसे साधारण भोजन के लिये तयार न होगा। स्टालिन का बेटा वासिली खाने के कमरे में रक्खे हुए एक पलंग पर सो जाता है। उसकी बेटी सुइड लाना इसी कमरे के पास एक कोठरी में सोती है। मध्यान्ह के भोजन के पश्चात् रूसी डिक्टेटर समाचार-पत्र हाथ में लेकर खिड़की

के पास बैठ जाता है और पाइप जलाकर दिन भर के समाचार पढ़ता है। वह प्रायः वही स्यूट पहने रहता है जिसे पहने हुए आपने उसे उसके फ़ोटो में प्रायः देखा होगा। वह स्यूट देखने में सैनिक सिपाही की वर्दी से मिलता जुलता है। किन्तु वास्तव में वह रूसी मज़दूरों का साधारण लिबास है। इसे सैनिक वर्दी और साधारण नागरिक लिबास के सम्मिश्रण से तयार किया गया है।

पाइप मुख में लिए हुए और तानेभरी मुखमुद्रा के साथ ऐसा प्रतीत होता है कि वह सदा हँसता ही रहता है। वह अपने भेंट करने वालों से मुलाक़ात करता है। रूस के हेनरी बार्बस नामक कवि ने एक बार स्टालिन की रहस्यमय हँसी पर एक विशेष लेख लिखा था, जिसका यह वाक्य उल्लेखनीय है "उसकी आंखों या रूप-रचना में कोई ऐसी बात है जिसके आधार पर देखने वाले समझते हैं कि स्टालिन हर समय मुस्कराता रहता है"

परन्तु इससे आगे उसने लिखा है कि वास्तव में हंसी का यह धोखा उसकी मुखमुद्रा से नहीं, वरन् आंखों की दबी हुई रचना से होता है। यह भी हो सकता है कि इस गर्जस्तानी कृषक पुत्र के रूप रंग के कारण—जिनमें द्वेष, कपट और स्यानपत यह सब बातें सम्मिलित रूप में पाई जाती हैं-उसके मुख पर हास्य का वातावरण बन गया हो।

स्टालिन की बड़ी विशेषता यह है कि रूसी क्रान्ति के किसी भी नेता थे उसकी समानता नहीं है। वहां के शेष सभी नेता लेखक थे। वह क्रान्ति के विषयों पर पुस्तकें और लेख लिखा करते थे। उन्होंने इस कला में विधिपूर्वक शिक्षण भी प्राप्त किया था। वह नेता लोग समाजवादी इतिहास से भली भांति परिचित थे। वह प्राचीन विद्रोह से लेकर फ्रान्सीसी क्रान्ति और वर्तमान काल के मजदूरों के विद्रोह तक के सभी

हाल जानते थे। उनके लेख मार्क्स, लैसल, प्रोडन और बैनकी आदि लेखकों के उदाहरणों से पूर्ण होते थे। किन्तु आप को स्टालिन की पुस्तकों और लेखों में कोई ऐसा उद्धरण प्राप्त न होगा। स्टालिन यदि कहीं उद्धरण देता भी है तो केवल एक लेखक के अर्थात् लेनिन के। ऐसा प्रतीत होता है कि उसने अपने यौवन-काल से अब तक केवल एक ही क्रान्तिकारी लेखक की कृतियां पढ़ी हैं और वह है लेनिन। उसी का वह बार २ हवाला देता और उसी के वाक्यों को लेकर उनका स्पष्टीकरण करता है। जैसे कि उसके निकट संसार में अन्य कोई लेखक पैदा ही नहीं हुआ।

स्टालिन का कथन है कि यदि सभी लेखकों के विचार लेनिन से समानता रखते हैं तो फिर मुझे उनको पढ़ने की आवश्यकता नहीं। और यदि लेनिन ने उनको उपेक्षणीय समझा है तो मैं उसी का शिष्य उनको क्यों प्रतिष्ठा दूँ। क्रेमलिन-भवन के रहस्यमय स्वामी स्टालिन के विषय में बहुत कुछ लिखा गया है। क्रांतिकारी स्टालिन के विषय में भी अगणित पुस्तकें निकली हैं। किन्तु एक व्यक्ति के नाते किसी ने उसके विषय में कुछ नहीं लिखा। शायद यही कारण है कि संसार के प्रत्येक भाग में उसके रहस्यमय गुण और स्वभाव की धूम है। लोग उसकी जीवन-घटनाओं को कथानकों का रूप देने लगे हैं।

उसकी प्रथम पत्नी का देहान्त सन् १९१७ में उस समय हुआ था, जबकि वह उत्तरी सागर के तट पर निर्वासित जीवन व्यतीत कर रहा था। उस समय रूस में क्रांति सफल नहीं हुई थी। उस बेचारी ने स्टालिन से विवाह करके कभी सुख नहीं पाया। जब तक वह जीवित रही, उसका पति बन्दी जीवन में रहा अथवा उसे पुलिस से बचने के लिये स्थान २ पर भटकना पड़ा। उसका जीवन-काल एक विचित्र संघर्ष में से गुजर रहा

था। वह स्वयं नहीं जानता था कि उसको अमुक रात्रि कहां व्यतीत करनी होगी ? यदि दल की आज्ञा होती तो उसे महीनों ग़ायब रहना पड़ता था। अन्त में जब स्टालिन को निर्वासित कर दिया गया तो उसको बहुत समय तक अपने पति के सम्बन्ध में कोई समाचार तक नहीं मिला। इस प्रकार वह अनेक प्रकार के कष्टों को झेलती हुई समय से पूर्व ही इस संसार से विदा हो गई। स्टालिन को वहीं पर उसकी मृत्यु का पता लगा। वह एक संक्षिप्त तार था जिसे ज़ारकालीन शासकों ने निर्वासित पति तक पहुँचने दिया था। जिस क्रांतिकारी का जीवन उस ख़रगोश की भांति व्यतीत होता हो जिसके पीछे हर समय विपक्षी कुत्ते लगे हों, उसके व्यक्तिगत जीवन का वृत्तान्त क्या हो सकता है ? इस बात का पता नहीं चलता कि पत्नी की मृत्यु से उसके हृदय पर कैसा प्रभाव पड़ा, क्योंकि उसने अपने भाव कभी प्रगट नहीं किये। सम्भवतः इस नए दुःख से वह मृतप्राय होगया होगा, क्योंकि अपने निर्वासित-जीवन के कारण वह पहले ही हतसाहस हो चुका था।

सौभाग्यवश इसके थोड़े समय पश्चात् ही १९१७ की क्रांति का आगमन हुआ और स्टालिन स्वाधीन होगया। अब वह सीधा सेंट पीटर्सबर्ग पहुँचा। उन ऐतिहासिक दिनों में उसके जीवन में एक नए अध्याय का आरम्भ हुआ। सेंट पीटर्सबर्ग पहुँच कर वह पार्टी के एक हितैषी सदस्य कारीगर आलिवलियो के यहां रहने लगा। जिस समय महान् क्रान्ति की ऐतिहासिक घटनाएं हो रही थीं और उसके पश्चात् जब अक्तूबर की विजय ने इस पार्टी को प्रभावशाली बनाने में सहायता दी तो वह इसी मकान में रहा। वह प्रातः काल बाहर निकल जाता और बड़ी रात गए वापिस आता था।

बाद में जब प्रथम क्रांतिकारी शासन की स्थापना हुई तो वह उसके एक सदस्य के रूप में भी वहाँ ही रहता रहा। यदि वह चाहता तो अपने निवास के लिये सेंट पीटर्सबर्ग का कोई सुन्दर भवन चुन सकता था अथवा यदि वह क्रेमलिन में रहना चाहता तो भी उसमें कोई बाधक न होता।

अन्त में कुछ समय पश्चात् वास्तविक स्थिति का पता लगा। उस समय यह भेद खुला कि रूस का भावी डिक्टेटर किसलिये उस कमरे में रह कर प्रसन्न था। क्रांति के सफल अन्त पर स्टालिन की आयु ३८ वर्ष की हो गई थी। वह अलि·लियो की पुत्री को साथ लेकर रजिस्ट्रार के कार्यालय में पहुँचा। वहां कुमारी अलिलोवना के साथ उसका विवाह सोवियट की सरल पद्धति द्वारा हो गया। उस समय उसकी पत्नी की आयु १८ वर्ष थी। किन्तु श्रीमती स्टालिन अब भी सर्व साधारण से अप्रगट ही रहीं। वह कभी २ केवल·विशेष त्योहारों पर ही स्टालिन के साथ दिखलाई देती थीं। उस समय लोग आश्चर्य के साथ पूछते थे कि वह कौन है ? जहां तक दोनों के व्यक्ति-गत जीवन का सम्बन्ध है, उस समय के समाचारों से कोई परिचित नहीं। किन्तु बाह्य दशाओं से इतना ज्ञान हो सका है कि यह विवाह प्रत्येक दृष्टि से हर्षोत्साह-उत्पादक प्रमाणित हुआ। इस विवाह के तीन वर्ष पश्चात् स्टालिन को एक पुत्र-रत्न की प्राप्ति हुई, जिसकी आयु इस समय १६ वर्ष है। अब वह और उसकी छोटी बहिन सोवियट लाना, जिसकी आयु अब १४ वर्ष है अपने पिता के पास ही रहते हैं।

श्रीमती स्टालिन के विषय में विशेषत: उस समय सुनने में आया, जब यह अफवाह प्रसिद्ध हुई कि वह भी श्रीमती मोलोटोव की भान्ति कलाकार-जीवन में कुछ भाग लेना चाहती

है। श्रीमती मोलोटोव सुगन्धित पदार्थों के कारखानों की अध्यक्षा थीं। सन् १६२६ में श्रीमती स्टालिन ने टकनिकल (कला सम्बन्धी) शिक्षा प्राप्त करना आरम्भ किया और नकली रेशम बनाने की विधि सीखी। जनता का विचार था कि अपना कोर्स समाप्त कर लेने पर डिक्टेटर की पत्नी को बनावटी रेशम के कारखानों का डाइरेक्टर बना दिया जावेगा। वह तीन वर्ष तक विधि-पूर्वक शिक्षण प्राप्त करती रही। इस अवधि में न तो प्रोफेसरों ने उसे कोई विशेष सुविधा दी और न ही श्रीमती स्टालिन ने किसी सुविधा की मांग की। वह प्रत्येक परिश्रम का काम अपने हाथ से करती और दूसरे विद्यार्थियों के समान सादा वस्त्र धारण करती थी। वह अन्य शिक्षार्थियों के समान मशीनों पर काम करती और बेंच पर बैठ कर व्याख्यान सुनती थी।

इसके बाद ८ नवम्बर सन् १६३२ को अचानक समाचार मिला कि श्रीमती स्टालिन की मृत्यु हो गई। उस समय उसकी आयु केवल ३८ वर्ष थी। प्रगट रूप में उसे कोई रोग न था। उसकी असामयिक मृत्यु पर प्रत्येक व्यक्ति को भारी दुःख हुआ। संसार में सर्वत्र आश्चर्य छा गया।

श्रीमती स्टालिन की मृत्यु के सम्बन्ध में कई प्रकार की कल्पनाएं और अफवाहें प्रसिद्ध हैं। सम्भव है उसका यह कारण हो कि योरुप के अन्य देशों का रूस से अधिक घनिष्ट सम्बन्ध नहीं है और इसी तरह सोवियट जन-तंत्र से आई हुई प्रत्येक खबर सन्देह के साथ सुनी जाती है। एक समाचार यह भी था कि श्रीमती स्टालिन का जीवन वर्षों से कटु बन गया था और उसने उससे परित्राण पाने के लिये निरुपाय होकर आत्म-हत्या करली। किन्तु घटनाएं और साक्षियाँ इस कथन का खंडन

करती हैं। श्रीमती स्टालिन विवाह के पश्चात् १० वर्ष तक घर पर ही रहती रही और उसके बच्चे काफी बड़े हो गए। पति पत्नी में अनबन के चिन्ह कभी भी दृष्टि-गोचर नहीं हुए। इसके अतिरिक्त कुछ साक्षियां इस सम्बन्ध में भी मिलती हैं कि स्टालिन को अपने परिवार वालों से असीम स्नेह था। जब कभी उसे फुर्सत मिलती, वह सीधा अपने कुटुम्ब में चला आता था।

एक अन्य किंवदन्ती पहिले से भी अधिक प्रसिद्ध हुई। सुना गया कि कुछ व्यक्तियों ने स्टालिन के प्राण लेने का षड्यन्त्र रचा था। उन्होंने उसके भोजन में विष मिला दिया। किंतु उस भोजन को श्रीमती स्टालिन ने ही खाया और अपने प्राण देकर अपने पति के प्राणों की रक्षा की। किन्तु यह कथन इतना विचित्र प्रतीत होता है कि इसकी सत्यता पर अकारण ही संदेह होता है। इस सम्बन्ध में ऐसी ही कई अन्य मनोहर और आकर्षक अफ़वाहें फैलीं, किन्तु तथ्य कुछ और ही था। वास्तव में श्रीमती स्टालिन को पेट की झिल्ली की सूजन का रोग था, किन्तु उसने रोग-उपचार पर विशेष ध्यान नहीं दिया। उसने कई दिन तक कठोर पीड़ा से दुःखी रहने पर भी अपने पति को सूचित नहीं किया। पीड़ा निस्सन्देह अधिक थी, किन्तु वह चुपचाप सहन करती रही। अन्त में जब बिलकुल न सह सकी तो डाक्टरों को बुलवाया गया। किन्तु उस समय रोग सीमा को पार कर चुका था। अतएव श्रीमती स्टालिन के प्राण न बच सके।

स्त्री के मरने के पश्चात् लोगों को इस तथ्य का ज्ञान हुआ कि स्टालिन को अपनी जीवन-सहचरी से प्रगाढ़ प्रेम था। वह अक्तूबर की क्रान्ति से लेकर इस समय तक उसके जीवन के प्रत्येक कार्य में भाग लेती रही। स्टालिन के इस प्रगाढ़ स्नेह का एक अन्य बड़ा प्रमाण यह है कि उसने अपनी पत्नी के शव को

जलवाने के स्थान पर दफ़न करवाया। उसकी क़ब्र पर एक सादा पत्थर लगवाने के अतिरिक्त उसने वहां फूलों के अनेक पौदे भी लगवाए। सोवियट रूस में प्रायः पुरुषों के शव को जलाया जाता है। इसके लिए स्थान २ पर क्रेमोरियम बने हुए हैं और कोई सच्चा क्रांतिकारी तो भूल कर भी अपने सम्बन्धी के शव को दफ़न करने पर सहमत नहीं होता। दफ़न करने की विधि केवल उन लोगों तक सीमित है जो अभी तक पुराने विचारों के समर्थक हैं। स्टालिन से बढ़ कर क्रांति-पोषक और कौन होगा? किन्तु उसने अपने पत्नी के शव को जलाना स्वीकार नहीं किया, वरन् उसे एक प्राचीन इमामबाड़े के कब्रिस्तान में दफ़न करा दिया। यदि कोई यात्री इस सादा कब्र को देखे तो वह उस निहित गाढ़ प्रेम से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता, जिसने स्टालिन को उसके आस पास फूलों की क्यारियां लगवाने पर विवश किया है। इस समय उसके पत्नी के परलोक-वास को कई वर्ष गुज़र चुके हैं और क्रेमलिन-भवन का रहस्यमय स्वामी स्टालिन इस समय भी अपने दो बच्चों सहित शान्त-जीवन व्यतीत कर रहा है। वह अपने हार्दिक भाव कभी प्रगट नहीं करता। अतः कोई नहीं कह सकता कि उसने यह दूसरी विपत्ति किस प्रकार सहन की होगी और उस विपत्ति का उसके जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा होगा।

अभी यह समाचार भी सुनने में आया है कि स्टालिन तीसरा विवाह करने की इच्छा कर रहा है। यह स्त्री कागानोविच बन्धुओं की बहिन है, जो स्टालिन के साथ लम्बे अर्से से मिल कर काम कर रहे हैं और जिनके हाथ में सोवियट रूस की आर्थिक व्यवस्था है। किन्तु उपरोक्त समाचार का समर्थन अभी तक मास्को से नहीं हुआ। अतः इस सम्बन्ध में अभी कोई बात निश्चय-पूर्वक कह देना समय से पूर्व होगा।

१०

ट्रॉट्स्की और चतुर्थ अन्तर्राष्ट्रीय

ट्रॉट्स्की का पूरा नाम लेना डेविडोविच ब्रोस्टीन था। उसका जन्म सन् १८७७ में मध्य श्रेणि के एक यहूदी के यहां ओडेसा के पास बियालिस्टक नामक गांव में हुआ था। वह चीफ यूनीवर्सिटी में अध्ययन करते समय ही क्रान्तिकारी आन्दोलन में शरीक हो गया। आरम्भ में वह मेनशेविक अथवा रूसी समाजवादियों के नरम दल का था, किन्तु बाद में वह अत्यंत उग्र विचार का हो गया। यहां तक कि सन् १८९८ या १९०१ में उसको ज़ार सरकार ने गिरफ्तार करके साइबेरिया में निर्वासित कर दिया। किन्तु वह वहां से भाग निकला और ट्रॉट्स्की के नाम से एक जाली पासपोर्ट लेकर इंगलैण्ड जा पहुँचा। लेनिन और प्लेखानोव वहाँ पहिले से ही मौजूद थे। वह दोनों भी निर्वासित रूसी क्रान्तिकारी थे। उनके सम्पर्क से ट्रॉट्स्की के विचारों में स्थिरता एवं दृढ़ता आगई।

१९०५ में रूस लौटने पर ट्रॉट्स्की पहिले मेनशेविक अर्थात् माडरेट क्रान्तिकारी दल का प्रधान बना, किन्तु बाद में वह लेनिन के नेतृत्व में बोल्शेविकों (गरम दल) के साथ हो गया। १९०५ में जो राज्यक्रान्ति करने की आयोजना की गई थी, उसके सिलसिले में ट्रॉट्स्की को सेंट पीटर्स बर्ग की एक

सभा का सभापतित्व करते समय गिरफ्तार कर लिया गया। अब की बार निर्वासित करके उसको टोबलुस्क भेजा गया, किन्तु वह वहां पहुंचते ही वहां से भाग निकला और विएना पहुंचा, जहां उसने प्रवदा आदि अनेक समाचार पत्रों में काम किया।

१९०५ से लेकर १९१४ तक वह यूरोप के अनेक देशों में रहा। जहां २ वह रहा वहीं २ उसने क्रान्तिकारी संस्था का संगठन किया। १९१४–१८ का यूरोपीय महायुद्ध छिड़ते समय वह जर्मनी में था। इस समय उसने युद्ध के कारणों पर एक किताब लिख कर उसमें कैसर की सरकार की तीव्र आलोचना की। इस पर उसको गिरफ्तार करके आठ महीने के लिये जेल भेज दिया गया। जेल से छूटने पर वह जर्मनी छोड़ कर फ्रांस पहुंचा। वहां भी उसने एक लेखमाला में फ्रेंच सरकार की जर्मनी के विरुद्ध युद्ध में संलग्न होने के लिये भर्त्सना की। इसपर उसको फ्रांस से निर्वासित किया गया।

फ्रांस से निर्वासित होकर उसने स्पेन जाने का यत्न किया, किन्तु इसमें उसको सफलता नहीं मिली। अंत में वह अमेरिका गया, जहां उसने १९१६ से लेकर १९१७ तक 'न्यू वर्ल्ड' नामक पत्र का सम्पादन किया। इस बीच में वह रूस के बोल्शेविक दल को भी बराबर सहायता पहुंचाता रहा। १९१७ में रूस में राज्यक्रान्ति आरम्भ होने पर उसने रूस लौटने का यत्न किया। किन्तु वहां से आते हुए कैनाडा के हैलीफैक्स नामक स्थान पर उस को ब्रिटिश अधिकारियों ने गिरफ्तार करके नजरबन्द कर दिया और रूस को अस्थायी सरकार की प्रार्थना पर उसको छोड़ा गया। वह लेनिन के रूस आने के कुछ समय बाद ही पेट्रोग्रेड पहुंचा। १९१७ में वह लेनिन की बोल्शेविक पार्टी में सम्मिलित हो गया। अब उसने ऐसे २ महत्वपूर्ण कार्य किये कि इतने

महत्वपूर्ण कार्य लेनिन के अतिरिक्त और किसी ने नहीं किये। बोल्शेविक दल में लेनिन के बाद उसी का नम्बर था। उसको लेनिन का दाहिना हाथ माना जाता था।

अब की बार उसको जुलाई १९१७ के विद्रोह में फिर गिरफ्तार किया गया, किन्तु वह शीघ्र ही छूट गया। इसके बाद उसने अक्तूबर १९१७ की प्रसिद्ध राज्यक्रान्ति में लेनिन के साथ इतना महत्त्वपूर्ण कार्य किया कि जारशाही का अंत होकर रूस का शासन बोल्शेविक दल के हाथ में आ गया।

अब उसने रचनात्मक कार्य में अपनी असाधारण प्रतिभा का परिचय दिया। पहिले उसको परराष्ट्र मंत्री बनाया गया। इस विभाग का संगठन कर लेने के बाद उसको युद्ध विभाग का अध्यक्ष बनाया गया। अब उसने जारशाही के समय के उन सभी पुराने सेनाधिकारियों का उपयोग किया, जो नई सरकार के आधीन करने को सहमत हो गए। इस समय उसने रूस की उस प्रसिद्ध लाल सेना का संगठन किया जिस की धाक पूँजीवादी एवं साम्राज्यवादी सभी देश मानते हैं। लाल सेना का संगठन करके सारे रूस में श्वेत रूसी सेना को पराजित कर देने पर ट्रॉट्स्की पर क्रान्ति के समय विध्वस्त हुई रेलवे के पुनर्जीवन का भार डाला गया। इस कार्य को भी सफलता पूर्वक समाप्त कर देने पर उसको उन सैनिकों को काम पर लगाने का काम सौंपा गया, जिनकी युद्ध के लिये आवश्यकता नहीं रही थी। ट्रॉट्स्की ने इस कार्य को भी सफलतापूर्वक पूर्ण किया।

अब ट्रॉट्स्की का उन लोगों से मतभेद आरम्भ हुआ, जो उसको अपने दल में अपेक्षाकृत नवागंतुक समझ कर उससे ईर्ष्या सी करने लगे थे। इस समय स्टालिन कम्यूनिस्ट पार्टी का प्रधान मंत्री था। वह भी ट्रॉट्स्की की इस उन्नति से ईर्ष्या करता

था। १९२३ में स्टालिन तथा जिनोवीफ आदि ने ट्रॉट्स्की पर यह आरोप लगाया कि वह नयों का सहारा लेकर पुरानों को हटाना चाहता है। किन्तु लेनिन ने इन लोगों का मेल करा दिया। तो भी लेनिन के रोग शय्या पर पड़ते ही लोगों ने फिर ट्राट्स्की को बदनाम करना आरम्भ किया। परिणाम यह हुआ कि २१ जनवरी १९२४ को लेनिन का देहांत होने पर ट्रॉट्स्की ने वसीयतनामे के शब्दों के प्रतिवाद स्वरूप लेनिन के अंत्येष्टि संस्कार में सम्मिलित होने से इंकार कर दिया। वास्तव में ट्राट्स्की ने अपनी जीवनी में सब से बड़ी भूल यही की।

बर्ट्रेण्ड रसेल ने अपने ग्रंथ में लिखा है कि 'यदि जर्मन सेनापति लेनिन को बन्द गाड़ी में छिपा कर जर्मनी में से निकाल कर रूस न पहुंचाता तो रूस में क्रांति न होती। यदि ट्रॉट्स्की क्रोध के वशीभूत होकर लेनिन के अंत्येष्टि संस्कार में सम्मिलित होने से निषेध न कर देता तो सोवियट में पंचवर्षीय योजना संभवतः कभी न बनाई जाती। यदि आस्ट्रियन पार्लिमेंट की वोट के आड़े समय में एक समाजवादी सदस्य स्नानागार में न चला जाता तो डाल्फस वहां का चांसलर न बनता। उसी प्रकार यदि मुसोलिनी अपने बाल्य जीवन में स्वीज़लैंण्ड में जाकर कष्ट न उठाता तो इटली की दशा किसी और ही प्रकार की होती।"

अब स्टालिन और उसके गुट ने ट्रॉट्स्की को बुरी तरह से बदनाम करना आरम्भ किया। अन्त में ट्रॉट्स्की को १९२५ में परराष्ट्र विभाग से अस्तीफ़ा देकर काकेशिया में नजर बन्द होना पड़ा। कुछ दिनों बाद उसको वहां से फिर बुलाकर एक साधारण पद पर रखा गया। किन्तु १९२७ में उसको फिर टर्की को निर्वासित कर दिया गया। अब की बार उसको अपने देश को

छोड़ कर फिर देखना नसीब नहीं हुआ। टर्की की सरकार ने भी उसको कुछ समय के बाद अपने यहां से निकाल दिया। इसके पश्चात् उसको बड़ी कठिनता से स्पेन में रहने की अनुमति मिली। किन्तु उसको यह स्थान भी छोड़ना पड़ा। यूरोप का कोई राष्ट्र इस भीषण क्रान्तिकारी को स्थान देने को तयार नहीं था। अन्त में सन् १९३६ में उसको अमेरिका के मैक्सिको देश में रहने की स्वीकृति मिली। किन्तु षड्यंत्र उसके पीछे वहां भी चलते रहे। कई बार उसके प्राण लेने का यत्न किया गया। किन्तु वह बराबर बचता रहा। ट्रॉट्स्की इस समय भी बराबर ग्रन्थ लेखन का कार्य करता रहा। ट्रॉट्स्की के भूमण्डल में अनेक अनुयायी हैं। उन्होंने स्टालिन की तृतीय अन्तराष्ट्रीय की स्थापना की।

जून १९४० में ट्रॉट्स्की के मकान पर एक संगठित आक्रमण किया गया। उस समय मशीनगनों की सैकड़ों गोलियां उस में गिरी। इस बीच में फ्रांक जान्सन एक फ्रेंच यहूदी ट्रॉट्स्की के सिद्धान्तों पर मोहित होकर मैक्सिको आया। उसका जन्म तेहरान में हुआ था और वह बेल्जियम के एक राजनीतिज्ञ का पुत्र था। जान्सन ने फ्रांस और संयुक्त राज्य अमेरिका में ट्रॉट्स्को के आन्दोलन का प्रचारक बन कर ट्रॉट्स्की का विश्वास प्राप्त किया। जानसन २० अगस्त १९४० को तीसरे पहर ट्रॉट्स्की से उसके मकान के बाहिर सहन में मिला। उसने उसको अपना लिखा एक लेख दिखलाकर उसका मत जानना चाहा। इस पर ट्रॉट्स्की उसको अपने कमरे में लिवा ले गया। पीछे चलते समय उसने ट्रॉट्स्की के सिर पर पीछे से हथौड़ा मारा। ट्रॉट्स्की चोट लगते ही चीख मार कर गिर पड़ा, जिससे उसके कंधे तथा घुटने में भी चोट लगी। जान्सन ने गिरनेपर भी उस पर वार करना जारी रखा। चीख की आवाज सुनते ही

ट्रॉट्स्की के रक्षक दौड़े हुए आए। उन्होंने जान्सन को पीटते २ बेहोश कर पुलिस को दे दिया। ट्रॉट्स्की को तुरन्त अस्पताल पहुँचाया गया। मृत्यु से पहिले ट्रॉट्स्की ने कहा कि हत्यारा स्टालिन की गुप्त समिति ओगपू का सदस्य या कोई फ़ासिस्ट है। उसने बेहोश होने से पूर्व कहा "मैं एक राजनीतिक हत्या के फल स्वरूप मृत्यु के निकट हूँ। कृपया मेरे साथियों को बतला दीजिये कि चतुर्थ अन्तर्राष्ट्रीय की सफलता अनिवार्य है। आगे बढ़ते रहिये।'

आपेरेशन करने पर उसके सिर में दो इञ्च गहरा घाव पाया गया। उसको रात भर इंजेक्शन दे देकर जीवित रखा गया। किन्तु अगले दिन २१ अगस्त १६४० बुधवार की शाम को ७ बज कर ३५ मिनट पर उसका देहान्त हो ही गया। इस प्रकार ट्रॉट्स्की ने किशोरावस्था में विद्रोह की ज्वाला से प्रज्वलित होकर वैभवशाली जीवन को ठुकराया। तरुणावस्था में विद्रोह की आग सुलगाई, प्रौढ़ावस्था में विद्रोह की सच्ची आग के कारण स्वयं अपने ही देश से निर्वासित होकर इधर उधर दुनिया की खाक छानी और वृद्धावस्था में स्वास्थ्य के गिरते रहने एवं आंखों के जवाब दे देने पर भी अपने अमर उत्साह से विश्वक्रान्ति के अपने ध्येय के लिये बराबर प्रयत्न किया। इसी लिये जिस देश में वह रहा उसी देश की सरकार को उसने भयभीत किया और एक के बाद दूसरे देश का आश्रय लेते हुए अन्त में मैक्सिको में अपने ही एक विश्वासघाती जाति भाई के हाथ मारा गया।